इतिहास दिवाकर

त्रैमासिक अनुसंधान पत्रिका

वर्ष ८ अंक १ चैत्र मास कलियुगाब्द ५११७ अप्रैल २०१५

मार्गदर्शक :
डॉ० शिवाजी सिंह
चेतराम
इरविन खन्ना

सम्पादक :
डॉ० विद्या चन्द ठाकुर

सह सम्पादक
चेतराम गर्ग

सम्पादक मण्डल :
डॉ० रमेश शर्मा
डॉ० ओम प्रकाश शर्मा

टंकण एवं सज्जा :
अश्वनी कालिया

सम्पादकीय कार्यालय :
ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान,
नेरी, गांव—नेरी, डाकघर—खगल
जिला—हमीरपुर—१७७००१ (हि०प्र०)
दूरभाष : ०१९७२—२०३०४४

मूल्यः
प्रति अंक —१५.०० रुपये
वार्षिक — ६०.०० रुपय
itihasdivakar@yahoo.com
chetramneri@gmail.com

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय

संवीक्षण

दधीचि के अस्थि वज्र से वृत्रासुर वध	बाबा साहेब आपटे	३
भारत का पौराणिक भूगोल	डॉ. ओम दत्त सरोच	११
भारतवर्ष की इतिहास दृष्टि	गुंजन अग्रवाल	१४

कृषि दर्शन

कुलुई की कृषि व्यावसायिक शब्दावली - ३	मौलू राम ठाकुर	३२

शेष-अशेष

ठाकुर रामसिंह का अन्तिम सफर	प्रेम सिंह भरमौरिया	३६

आयोजन

ठाकुर रामसिंह जन्म शताब्दी समारोह	रवि ठाकुर	४५

सम्पादकीय

इतिहास के सभी पक्षों का बोध

नव संवत्सर कलियुग ५११७, विक्रमी संवत् २०७२ तथा शक संवत् १९३७ सर्व मंगलमय हो।

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से हमारा नव संवत्सर आरम्भ होता है। नये वर्ष की पहली तिथि होने के कारण चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को वर्ष प्रतिपदा के नाम से जाना जाता है। वर्ष प्रतिपदा भारत को गौरवशाली परम्परा का बोध करवाती है और इसी बोध से भारत के इतिहास और संस्कृति के प्रकाश में वर्तमान और भविष्य का मार्ग प्रशस्त होता है। यहां इस ओर ध्यान देना आवश्यक है कि हम इतिहास की उपलब्धियों का ही गुणगान न करते रहें, अपितु उस इतिहास को भी ध्यान में रखें जिसमें हमारे अतीत की गलतियों का वर्णन है। इन्हीं गलतियों के परिणाम हमें जागरूक करते हैं कि फिर से हम उन गलतियों को न दोहराएं। इसी जागरूकता में ही राष्ट्र समाज और मानव जीवन के वर्तमान और भविष्य की उज्जवल सम्भावनाएं समाहित है।

परम पूज्य सरसंघचालक डॉ. मोहनराव भागवत जी का यह प्रेरक कथन उल्लेखनीय है कि जब तक देशवासी स्वयं को नहीं पहचानेंगे तब तक हमारे चारों ओर भिन्न-भिन्न समस्याएं बनी रहेगी। आज हम देश की समस्याओं के लिए एक-दूसरे पर दोषारोपण करते हैं, लेकिन इससे कुछ नहीं होने वाला। पहलें हम अपने को पहचानें, तभी हम देश को आगे बढ़ा पाएंगे और तभी देश के भाग्य का उदय होगा। हमारे संघ के कार्यक्रम शक्ति प्रदर्शन के लिए नहीं, बल्कि आत्मदर्शन के लिए होते हैं। ये कार्यक्रम आत्म साक्षात्कार हैं, ताकि हम अपनी क्षमताओं को पहचानें और उसका उपयोग राष्ट्रहित में करें।

वास्तव में आत्मदर्शन एवं अपनी क्षमताओं के समुचित आकलन के लिए इतिहास के अच्छे बुरे सभी पक्षों का बोध होना अत्यावश्यक है।

विनीत,

डॉ. विद्या चन्द ठाकुर,

संवीक्षण

दधीचि के अस्थि वज्र से वृत्रासुर वध

बाबा साहब आपटे

अपने शत्रु को मारने के साधनस्वरूप इन्द्र जिस आयुध का उपयोग करता था, उसका नाम अपने पुराण ग्रन्थों में 'वज्र' बताया गया है। किन्तु वृत्रासुर को मारने के लिए इन्द्र ने जिस वज्र का प्रयोग किया था वह उसका स्वयं का न था, वह तो एक विशेष प्रकार का वज्र था और वह उसी उद्देश्य से तैयार कराया गया था, ऐसा वर्णन प्रसिद्ध है। इन्द्र का वज्र सामान्यतः किस पदार्थ का बनता था, इसका वर्णन कहीं भी नहीं मिलता। किन्तु वृत्रासुर को मारने के लिए जो विशेष वज्र बनाया गया था, वह दधीचि नामक एक महर्षि की अस्थियों से बना था। वृत्रासुर को मारने के लिए दूसरे किसी भी आयुध का उपयोग नहीं हो सकता था। इन्द्र से कहा गया था कि वृत्रासुर को मारने का एकमात्र यही उपाय है कि दधीचि की अस्थियों से बने हुए वज्र का उस पर प्रयोग किया जाए। जब इन्द्र ने महर्षि के पास जाकर अपना उद्देश्य बताया तब बड़े आनन्द से योग द्वारा उन्होंने प्राणत्याग कर दिया। तत्पश्चात् उनकी हड्डियों से बने हुए वज्र से इन्द्र ने वृत्रासुर का वध किया। इस प्रकार की यह बड़ी विलक्षण कथा है।

क्या यह शब्दशः सत्य है?

अति प्राचीन वेदों से लेकर अर्वाचीन पुराणों तक बहुत से ग्रन्थों में इस घटना का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उल्लेख है, इस कारण इस घटना की ऐतिहासिकता में कोई सन्देह नहीं रह जाता। किन्तु उससे भी अधिक आश्चर्य की बात यह है कि इस एक प्रसंग को छोड़ देने पर इतने विशाल संस्कृत साहित्य में कहीं भी अस्थि के ऐसे उपयोग का वर्णन नहीं मिलता। शस्त्र का वर्णन अनेक स्थानों पर मिलता है किन्तु वह लोहा आदि धातुओं से बनता था, ऐसा स्पष्ट या अस्पष्ट रूप से कहा गया है।

फिर यह समझना भी कठिन नहीं है कि जिस काल में कोई मानव समाज शस्त्रों के निर्माण के लिए अस्थि का प्रयोग करता था, उस अस्थियुग की जंगली अवस्था में समाज कार्य के लिए आनन्दपूर्वक मृत्यु का आलिंगन करने का ऐसा ज्वलन्त ध्येय वाद, जो श्रेष्ठ मन में ही उत्पन्न हो सकता है, सम्भव नहीं हो सकता। यह बात समझना कुछ कठिन नहीं है। ऐसी अवस्था में बुद्धिमान लोगों का विचारशील मस्तिक इस बात को नहीं स्वीकार कर सकता कि अस्थि से आयुध बनने की कथा को वाच्यार्थ में शब्दशः सत्य मान लेना चाहिए।

रूपकात्मक वर्णन

वास्तविकता यह है कि पुराणों में अन्य अनेक स्थानों पर किए गए वर्णन के समान यह भी एक रूपकात्मक उदाहरण ही है। यह बड़ा चमत्कारपूर्ण है इसमें शंका नहीं, किन्तु पुराणों में इस प्रकार

के वर्णन क्यों मिलते हैं और पुराण–लेखकों ने इस विशिष्ट शैली का उपयोग करते हुए ये ग्रन्थ क्यों रचे, इसकी कारण परम्परा का थोड़ा विचार करने से यह बात सहज में ही समझ में आ जायेगी।

प्रमुख कारण

इसके दो प्रमुख कारण हैं। यह अत्यन्त प्राचीनकाल की घटना है। इसके घटित होने के पश्चात् दन्तकथा के स्वरूप में यह समाज में आई और हजारों वर्षों का काल बीत जाने के पश्चात् इसको लेखबद्ध कर निश्चित शब्द रूप दिया गया। यह प्रथम कारण है। दूसरा कारण यह है कि जिस काल में यह प्राचीन कथाएँ या गाथाएँ संकलित की गई और उनको ग्रन्थ रूप दिया, उस काल में समाज के नेताओं की ऐसी इच्छा थी कि समाज के सभी आबाल-वृद्ध स्त्री पुरुष तक यह ज्ञान पहुंचना चाहिए। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए सारी बात घटनाओं का कार्य-कारण भाव से विवेचन करते हुए, सारी बात को सरल कहानी के रूप में देने वाले सर्वसामान्य के समझने योग्य और सरस वर्णन से युक्त तथा मनोरंजक एवं आकर्षक ग्रन्थ का निर्माण करना आवश्यक हो गया। किन्तु दूसरी ओर आज के समान आवागमन की सुविधाएँ और ज्ञान प्रसार के लिए मुद्रण आदि के साधन उस काल में उपलब्ध न थे। इसलिए उस काल में एक ही ग्रन्थ द्वारा ये तीनों कार्य करने के लिए ऐसा निश्चित किया गया। उन्होंने अनुभव किया कि आलंकारिक भाषा और रूपकात्मक शैली का अवलम्बन करने से यह उद्देश्य भलीभान्ति सिद्ध हो सकता है।

उस काल में इन ग्रन्थों का अध्ययन ही गुरु के मुख से होता था और उनके द्वारा शिष्य या श्रोताओं का समाधान किया जाता था। आगे चलकर यह परम्परा लुप्त हो गई। कालान्तर में लोगों की जिज्ञासा भी समाप्त हो गई। पुण्य सम्पादन करने या मनोरंजन करने के उद्देश्य से पुराण पढ़ने की प्रथा बढ़ती चली गई। इस कारण आज उस शैली में लिखे हुए ग्रन्थ निरर्थक भी लगते हैं और उनको लोग कपोलकल्पित कादम्बरी समझने के भ्रम में भी पड़ जाते हैं।

अगस्त्य का उदाहरण

आज का सर्वपरिचित इस प्रकार का उदाहरण यह है कि हिमाचल से स्पर्द्धा करने में विन्ध्यपर्वत इतना बढ़ गया कि सूर्य का मार्ग भी अवरुद्ध हो गया। उस समय विश्वकल्याण के हेतु दक्षिण की यात्रा के निमित्त अगस्त्य ऋषि विन्ध्य पर्वत पहुंचे। तब उनकी वन्दना करने के लिए विन्ध्य पर्वत झुका तथा उनकी आज्ञानुसार आज भी वैसा ही झुका हुआ है। इसी प्रकार कहा जाता है कि उन्हीं अगस्त्य ऋषि ने असुरों को उदरस्थ करने के लिए तीन आचमनों में समुद्र को पी लिया था। इन बातों का इतना ही अर्थ समझ में आता है कि उपनिवेश बसाकर अपनी संस्कृति का प्रसार करने में अगस्त्य अग्रगण्य थे। सबसे प्रथम दक्षिण पठार पर आश्रम बनाकर उन्होंने वहां आर्य संस्कृति का प्रसार किया, फिर सुदूर दक्षिण में कन्याकुमारी तक पहुंचकर उन्होंने समुद्र पार करने का प्रबन्ध किया और इतना ही नहीं जावा, सुमात्रा इत्यादि द्वीपों में उपनिवेश स्थापन करते हुए उस अत्यन्त प्राचीनकाल में बृहत्तर भारत की स्थापना की तथा दूर-दूर तक भारतीय संस्कृति की ध्वजा फहराने लगी। अगस्त्य समुद्रप्राशन की कथा में यह सार भरा है। असुरों को अपने उदर में स्थान देने के लिए और समुद्र का शासन करने के लिए अगस्त्य ने समुद्र पी डाला, इस चमत्कारपूर्ण वर्णन में पुराण लेखक

ने यह सारा वर्णन बड़ी खूबी से कह डाला है– यह सभी विद्वान स्वीकार करते हैं और इस कथा में वाच्यार्थ को ही ठीक समझने का आग्रह कोई भी नहीं करता।

सभी विद्वानों में से यह बात मान्य होती जा रही है कि पुराण में आने वाले ऐसे वर्णनों का अर्थ शब्दशः नहीं लेना चाहिए। विचार करने पर उनका अर्थ समझा सकने वाले संकेत पुराणों में ही कहीं न कहीं उपलब्ध हो जाते हैं। तब फिर विचार करने की इसी पद्धति से दधीचि की कथा पर विचार करना भी उपयुक्त होगा। कारण कि इस कथा के सम्बन्ध में उपयोगी संकेत पुराणों में उपलब्ध नहीं है, ऐसा नहीं है।

दधीचि की अस्थियाँ

दधीचि की हड्डियों में यह अलौकिक गुण उत्पन्न हो गया इसकी बड़ी मनोरंजक कारण मीमांसा पुराणों में दी गई है। एक बार देवों ने असुरों के भय से अपने अस्त्र-शस्त्र दधीचि के आश्रम में छुपा दिये थे। असुरों को इस बात का पता लगेगा जो बहुत गड़बड़ होगी, यह विचार कर गड़बड़ टालने के लिए दधीचि ने वे सारे शस्त्र पानी से धो डाले, इस वीर्य-सम्पन्न जल का पान कर लिया और उसको पचा डाला। इस प्रकार पानी उतारे हुए जो शेष शस्त्र बचे वे लोहे के टुकड़े मात्र थे और उनको ले जाने से असुरों को कोई लाभ न था।

कुछ काल पश्चात् देवों को शस्त्रों की आवश्यकता पड़ी और उन्होंने दधीचि से माँग की। इस पर दधीचि ने कहा– "तुम्हारे शस्त्र असुरों के हाथ न पड़े यह तुम्हारा उद्देश्य था। इसको पूर्ण करने के लिए कोई अन्य उपाय न देखकर मैंने ऐसा किया। अब वे सारे शस्त्र मेरी अस्थियों के साथ एकरूप हो गए हैं। तुमको वापिस चाहिए तो मेरी अस्थियों से उनको पुनः बनवा लो।" इसके अनुसार दधीचि ने देह-त्याग किया और इसके अनन्तर इन्द्र ने अपना कार्य पूर्ण किया।

यह सब पढ़ने के बाद उन लोगों के भोलेपन या बुद्धि की मन्दता का ज्ञान हो जाता है जो वाच्यार्थ को सत्य मानकर यह समझते हैं कि दधीचि की अस्थियों से वज्र बनाकर सचमुच ही वृत्रासुर का वध किया गया। इस कथा में स्पष्ट बताया गया है कि देवताओं के सारे शस्त्रों का सत्व दधीचि ने आत्मसात् कर लिया था।

'अस्थि' शब्द का लाक्षणिक प्रयोग

इस वर्णन पर विचार करने से यह सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि 'अस्थि' शब्द यहां लाक्षणिक अर्थ में लिया गया है। मनुष्य शरीर का सारा बल अस्थियों पर ही अवलम्बित रहता है और अस्थियां शरीर में अदृश्य रहकर शरीर धारण करती हैं। दोहरी हड्डियों का मुनष्य अर्थात् अच्छा बलवान मनुष्य, यह प्रचलित शब्द-प्रयोग यही दर्शाता है। हाथों अथवा पांवों की हड्डियां टूट जाने पर, उन अंगों के शेष भाग-स्नायु आदि वैसे ही कायम रहते हैं फिर भी वे अवयव पूर्णतया लुंजे के समान हो जाते हैं। मनुष्य को ऊँचाई, मोटापन आदि सभी कुछ इस अस्थिपंजर के कारण ही प्राप्त होता है। सामान्य मनुष्य को भी अस्थियों का यह महत्व सरलता से अनुभव होता है। इसी कारण पुराण के चतुर लेखकों को इस शब्द को लाक्षणिक अर्थ में प्रयोग करने की कल्पना हुई। अंग्रेजी में भी इस शब्द का

ऐसे लाक्षणिक अर्थ में प्रयोग करने की पद्धति है। साहसी, दृढ़ निश्चयी, तेजस्वी आदि अर्थों में इस शब्द का प्रयोग वे लोग करते हैं। कोई बड़ा ढिलमिल या दुर्बल है– इस कारण उसमें कर्तृत्व या तेजस्विता नहीं, यह बताने के लिए कहा जाता है– He has No back -bone .

किन्तु शरीर बल ही सच्चा बल नहीं है। सच्चा बल तो मन का होता है। विचार, भावना या ध्येय ही मनुष्य के मन को सच्चा सामर्थ्य और वैशिष्ट्य प्रदान करते हैं। मनुष्य के जीवन में किसी आधारभूत तत्त्वज्ञान के होने या न होने पर उसके जीवन का प्रभावी होना न होना निर्भर करता है। उसका तत्त्वज्ञान सत्य पर अधिष्ठित हो और उस पर उसकी सच्ची निष्ठा हो तो वह मनुष्य सैकड़ों-हजारों लोगों में महान माना जाता है। तलवार या बन्दूक के सामर्थ्य की अपेक्षा मनुष्य के मन के सामर्थ्य का मूल्य कहीं अधिक है। सब देशों में, सब कालों में यही अनुभव में आया है कि क्रान्तिकारी विचारों की सामर्थ्य के सामने सैन्यों और बन्दूकों की शक्ति निर्जीव तथा व्यर्थ सिद्ध होती है। बस, इस प्रकार कर्म की चेतना जागृत करने वाला विचार अथवा तत्त्वज्ञान ही सच्चा शस्त्र होता है। ऐसा मानकर यदि एकाध अलंकारप्रिय लेखक ने उसका वैसा वर्णन किया तो उससे कुछ बिगड़ता नहीं।

प्रभावी तत्वज्ञान का स्फुरण

देशभक्ति अथवा धर्मनिष्ठा कोई शारीरिक वृत्ति नहीं अपितु मानसिक भावना है, इसी कारण ऐसे सर्वपरिचित प्रयोग किये जाते हैं कि देशभक्ति अमुक के हाड़-मांस में भरी है, अथवा धर्मनिष्ठा उसके रोम-रोम में भिद गई है। ऐसे शरीर और मन की लाक्षणिक एकता मानकर, मानसिक बल का कारण बनने वाले जीवन दर्शन या विचार प्रणाली का वर्णन अस्थिपंजर की उपमा देते हुए किया गया और इसीलिए देवताओं के शस्त्रों का वीर्यसम्पन्न जल-प्राशन करने और पचा जाने से दधीचि की अस्थियों में विचित्र सामर्थ्य उत्पन्न होने की इस कथा ने जन्म पाया।

स्पष्ट शब्दों में कहें तो उस काल में देवताओं में प्रचलित सर्व शस्त्रों का अध्ययन या मनन करने से दधीचि मुनि के मस्तिष्क में एक नवीन और प्रभावी जीवन का तत्वज्ञान स्फुरित हुआ और उसका ही वर्णन वृत्रासुर को मारने में समर्थ, अमोघ शस्त्र के रूप में हुआ।

वृत्रासुर

किन्तु ऐसे तत्वज्ञान के सामर्थ्य से मारा जाने वाला वृत्र केवल अस्त्र-शस्त्र से लड़ने वाला कोई सामान्य असुर नहीं था। उसका पराक्रम बड़ा विचित्र था। उसके सम्मुख जो जाता था उसको वह खा लेता था। उसने सूर्य को ग्रस लिया था जिससे सारा विश्व संज्ञाहीन हो गया, ऐसा वर्णन आया है।

इस वृत्रासुर के जन्म की कथा बड़ी विलक्षण है। त्वष्टा नाम का एक देवताओं का कारीगर था। उसका विश्वरूप अथवा त्रिशिरा नामक एक पुत्र था। वह बड़ा विद्वान किन्तु महत्त्वाकांक्षी था। उसकी माता असुर कन्या थी, इसलिए विश्वरूप गुप्तरूप से असुरों की सहायता किया करता था। जब वह तप करने बैठा तब इन्द्र को यह भय हो गया कि यह मेरा सिंहासन छीनने का प्रयत्न कर रहा है और उसने षड्यन्त्र कर त्रिशिरा का बध कर दिया। पुत्रशोक में त्वष्टा ने पागल होकर उग्र तप किया

और ब्रह्मदेव से वर में एक ऐसा पुत्र माँगा जो इन्द्र का वध कर सके। वही यह वृत्रासुर था।

'वृत्र' के धातु-अर्थ से देखने पर ज्ञात होगा कि इसका अर्थ है 'ढक देने वाला' अथवा 'पर्दा डाल देने वाला'।

रावण की अपेक्षा उसका पुत्र मेघनाद अधिक पराक्रमी था। इसी प्रकार वृत्रासुर भी बुद्धि और कृर्तत्व में अपने पिता की अपेक्षा श्रेष्ठ था। रावण के पुत्र के जन्मते ही मेघ के समान गम्भीर ध्वनि की थी, जिससे उसका नाम मेघनाद पड़ा। फिर युद्ध में उसने इन्द्र पर विजय प्राप्त की, तब उसे इन्द्रजीत कहने लगे। गुण के अनुरूप नामकरण करने की परम्परा बड़ी प्राचीन है। इसी प्रकार बाप की अपेक्षा सवाया ठहरने वाले (बाप के बल को ढक लेने वाले) त्वष्टा के इस पुत्र के कर्तृत्व का द्योतक यह 'वृत्र' नाम पड़ा।

ऐसा भी कहा जाता है कि वह वृत्र कोई शरीरधारी न था, बल्कि मनुष्यों के मन पर मोह का पर्दा डालकर उनको निष्क्रिय कर डालने की एक प्रणाली का नाम था। यह ठीक है या वह ठीक है, ऐसा करने से ठीक होगा या गलत होगा– इस प्रकार विचार करता हुआ जब मनुष्य किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाता है, तब ऐसी मनःस्थिति का परिणाम निष्क्रियता होता है। यह सर्व-सामान्य अनुभव की बात है।

ईशावास्योपनिषद्

ऐसे मोहरूपी वृत्रासुर को मारने के लिए दधीचि ने जीवन का जो तत्त्वज्ञान दिया, वह सौभाग्य से आज भी उपलब्ध है। यजुर्वेद का चालीसवां अध्याय दधीचि के नाम पर प्रसिद्ध है। उसकी गणना उपनिषदों में होती है और उसके पहले मन्त्र का आरम्भ 'ईशावास्य' से होने के कारण वह उसी नाम से प्रसिद्ध हैं शेष सारे उपनिषद् ब्राह्मण ग्रन्थ के आरण्यक भाग में हैं, किन्तु ईशावास्योपनिषद् साक्षात् वेद के अन्दर अन्तर्भूत हुआ है, इसीलिए उसे अग्रगण्य माना जाता है। वह उपनिषद् देखने में यद्यपि छोटा है फिर भी उसकी कीर्ति बहुत है– विस्तार में कम होने पर भी बहुत प्रसिद्ध है। उसमें केवल १८ श्लोक हैं। उसके विचारों द्वारा तथा अपनी अस्थियों का वज्र बना लेने की अनुमति देकर दधीचि ने इन्द्र को वृत्र-वध के लिए सहायता दी, आदि बातों के पारस्परिक सम्बन्धों की ओर ध्यान न देने से बड़ा गड़बड़ हुआ है। वह सम्बन्ध जोड़ने पर धीरे-धीरे सारा रहस्योद्घाटन होने लगता है और उस पर तत्कालीन समाज के सम्बन्ध में एक कल्पना मिल सकती है।

दो विचार प्रणलियां

उस काल में हमारे समाज में दो प्रकार की विचार प्रणालियों के लोग थे। एक तो इहलोक को तुच्छ समझकर सारा लक्ष्य परमार्थ की ओर देते थे और दूसरे परमार्थ आदि को बिल्कुल मिथ्या बताते हुए भोगवाद का प्रचार करते थे। दोनों ही एकांगी थे, किन्तु उसमें परमार्थवादी अधिक भयंकर थे। क्योंकि ऐहिक जीवन के सम्बन्ध में पूर्णतया और सचमुच उदासीन रहते हुए केवल परमार्थ मार्ग की साधना बहुत थोड़े लोग कर सकते हैं। शेष लोग ढोंग का आश्रय लेकर कपटपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगते हैं। भारत के जन-समाज को अनादि काल से यदि किसी बात से चिढ़ है तो दांभिकता या ढोंग से है। इसलिए उन ढोंगी लोगों की अपेक्षा समाज भोगवादी नास्तिकों की ओर अधिक झुकता है।

समाज की अध्यात्मवादी मण्डली से यह देखा नहीं जाता था किन्तु उनका अध्यात्मवाद

केवल तात्विक होता था। वह व्यावहारिक न था, इसलिए उससे लोगों का समाधान नहीं हो सकता था। इससे बड़ों-बड़ों की बुद्धि भ्रम में पड़ जाने से विचार क्षेत्र में एक अराजकता और गड़बड़ी उत्पन्न होती और समाज के उत्सन्न होने के लक्षण दिखाई देने लगते हैं।

उस समय साधारणतः परमार्थ मार्ग ही था, फिर भी ऐहिक जीवन की ओर बिल्कुल पीठ नहीं फेरी जाती थी। यदि कोई भोगवादी भी हुआ तो कोई उसकी ओर यह समझकर बिल्कुल ध्यान नहीं देता था कि यह निरर्थक बड़बड़ करता है। कुछ दिनों में आप ही ठीक मार्ग पर आ जाएगा, ऐसी सबकी धारणा थी।

भोगवादी विचार का प्रसार

किन्तु यह देखकर कि इन्द्र के समान उच्चपदस्थ पुरुष ने मत्सरग्रस्त होकर पुत्र का वध किया है, अत्यन्त सन्तप्त हुआ त्वष्टा जैसा कर्त्तव्यवान और बुद्धिमान पुरुष अपने दूसरे पुत्र की सहायता से जिस भोगवादी विचारधारा का पुरस्कार करने लगा, उससे जनता में बुद्धिभ्रम हो गया और सर्वत्र संशय व निराशा का वातावरण फैला। ऐसे संशय और निराशा के वातावरण का जिस-जिस पर प्रभाव हुआ, वह शीघ्र उससे मुक्त नहीं हुआ।

दधीचि की शरण में

त्रिशिरा को मारने पर सभी सात्त्विक वृत्ति के लोगों ने इन्द्र को उलाहना दिया। यहाँ तक कि वह कहीं मुँह दिखाने योग्य न रहा। इसलिए वह कहीं अज्ञातवास में चला गया। किसी प्रकार इस घोर जनापवाद से छुटकारा पाकर स्वस्थ मन से लौटा ही था कि एकाएक यह वृत्रासुर सम्मुख खड़ा दीख पड़ा। इन्द्र बहुत घबरा गया। उसकी कुछ समझ में न आया कि क्या करूँ। ऐसी घबराहट की मनःस्थिति में किसी प्रकार इन्द्र को यह समझ में आया कि उसका एवं सारे समाज का मार्गदर्शन दधीचि मुनि कर सकेंगे, क्योंकि वे विद्वान, कर्त्तव्य-दक्ष एवं रागद्वेषहीन सिद्ध पुरुष थे। इसलिए भयभीत होकर इन्द्र दधीचि के आश्रम में गया।

सामान्यतः मनुष्य अपने से ही दूसरों की परख करता है। अपनी विद्या दूसरे को दे देने से अपना महत्त्व नष्ट हो जायेगा ऐसा अधिकतर विश्वास किया जाता था। ये लोग ज्ञान या विद्या का व्यापार करते होंगे। आजकल लोग जिस प्रकार अपने व्यापारिक रहस्य (Trade secrets) प्रयत्नपूर्वक गुप्त रखते हैं, वैसे ही उस काल में लोग अपनी विद्या गुप्त रखते थे। फिर यह जो जीवन की आधारभूत श्रेष्ठ विद्या थी, उसका मांगना अर्थात् एक प्रकार से किसी के शरीर की अस्थियों की मांग करना है, ऐसी इन्द्र की समझ थी। इसलिए उसने बड़े संकोच से एवं विनम्रता से दधीचि को अपना मनोरथ बताया। किन्तु उसको यही अनुभव आया कि दधीचि मुनि उसकी कल्पना की अपेक्षा कहीं अधिक उच्च मनुष्य थे।

सतत क्रियाशील रहते हुए मन की शांतता किस प्रकार बनाए रखना एवं श्रेष्ठ आध्यात्मिक आनन्द किस प्रकार प्राप्त करना, सारे उपलब्ध शास्त्रों का अवलोकन और मनन करने से दधीचि ने यह साध्य कर लिया था। अपने विचारों की उपयुक्तता और उत्कृष्टता के सम्बन्ध में उनको अनुभव से उत्पन्न आत्मविश्वास प्राप्त था। इसलिए यह 'मेरी तत्व प्रणाली है' ऐसा क्षुद्र अंहकार उनको छू भी

नहीं गया था। अतीत में हुए विद्वानों के विचार उन्होंने प्रांजल बुद्धि से एवं कृतज्ञता के भाव से इन्द्र को बताए। उसके आग्रह पर बड़े आनन्द से अपने जीवन का तत्वज्ञान–ईशावास्योपनिषद् के रूप में सबके सम्मुख प्रकट किया।

इहलोक और परलोक समन्वय

प्रामाणिक लोगों की बुद्धि में आये हुए भ्रम को उड़ाने और उनके संशय को छिन्न-भिन्न करने तथा उनकी कर्म-चेतना को लुप्त करने वाली अति घातक विचार प्रणाली की धारा को उलट देने का उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किया। इहलोक और परलोक का समन्वय उन्होंने सुन्दर रीति से कर दिखाया।

केवल भोगवाद का पुरस्कार करने वालों को उन्होंने बताया कि यह सारा विश्व परमात्मा ने उत्पन्न किया है और परमेश्वर सर्वव्यापक है, समाज के व्यक्ति-व्यक्ति के साथ है। अतएव उसके द्वारा उत्पन्न सभी को अपने कर्म-सुमनों से उसका पूजन करना चाहिए और उससे जो प्राप्त हो, उसमें सन्तोष मानना चाहिए। स्वार्थवश अपने ही लिए सारे भोग प्राप्त करने की वृत्ति से कलह और गड़बड़ी उत्पन्न होती है और वास्तविक सुख और शान्ति कभी प्राप्त नहीं होती।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद् धनम्।। ईशावास्योपनिषद्-1

इसके विपरीत जो लोग ऐहिक कर्मों का निषेध कर रहे थे उनके लिए दधीचि ने निर्भीकता से कहा –

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः। ईशा. 2

कि इस लोक में अपना कर्त्तव्य उत्साहपूर्वक किन्तु ईश्वरार्पण बुद्धि से पूर्ण करते हुए सौ वर्ष पर्यन्त जीवित रहने की कामना करनी चाहिए। कारण कि इसी प्रकार से समाज की धारणा होती है और कर्त्तव्यपूर्ति के लिए काम करने के अभ्यास से व्यक्ति की आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है।

अविद्या भी आवश्यक

इस पर परमार्थवादियों ने यह आक्षेप किया कि ऐहिक भोगों में पड़ जाना ही अविद्या है।

इसका दधीचि ने यह उत्तर दिया कि तुम्हारा कहना अशंतः सत्य है, परन्तु पूर्ण सत्य नहीं। केवल भोगवाद से मनुष्य जीवन सार्थक नहीं होता। इससे तो अधःपतन ही होगा। किन्तु केवल परमार्थ के मार्ग से कितने लोग चल सकते हैं? हजारों या लाखों में एक-आध! फिर शेष कहाँ जायेंगे? 'प्रपंच छोड़कर परमार्थ किया, फिर अन्न भी खाने को नहीं मिला' ऐसा अनुभव आने पर वे क्या करेंगे? 'जीवित रहने के लिए खटपट (कर्म) क्या करना, यह सब अपनी गलती है' ऐसी आत्मग्लानि के अनुभव में क्या वे जीवन समाप्त करें? तत्व और व्यवहार की यह असंगति उनके मन को शान्तता कैसे प्राप्त करने देगी? दूसरों को वंचना देना बुरा है और आत्मवञ्चना और भी हानिकारक है। इसकी अपेक्षा –

विद्यां च अविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।। ईशा. ११

यह समन्वयात्मक विचार क्या अधिक कल्याणप्रद नहीं है। ऐहिक भोगों को प्राप्त करने के लिए खटपट (कर्म) करना अविद्या है। उस अविद्या के ही बल पर मृत्युकाल से भी भयानक व नित्य प्राप्त होने वाला जो मध्याह्नकाल या क्षुधारूप मृत्यु है, उसके पार जाने का उद्योग कर्त्तव्य-बुद्धि से और ईश्वरार्पण बुद्धि से अथवा (ईश्वर समष्टि रूप है इसलिए) समाजार्पण बुद्धि से करते रहने से ही कालान्तर में सुख-दुःख एवं यश-अपयश के द्वन्द्वों से छुटकारा मिलता है और मन को शान्ति प्राप्त होती है– ऐसा प्रत्यक्ष अनुभव है।

कर्म चेतना जाग्रत

इस प्रकार दोनों पक्षों के विचारों की अपूर्णता दिखाते हुए, दोनों के ही पास अधूरा सत्य है यह कहते हुए, दोनों परस्पर पूरक हैं ऐसा समझाकर दधीचि ने समाज में संशयवाद एवं नैराश्य से उत्पन्न निष्क्रियता दूर की और बुद्धि पर से मोह का आवरण दूर होने से समाज में पुनः नवीन कर्म-चेतना जाग्रत हुई।

इस प्रकार यह अत्यन्त उद्‌बोधक कथा है। किन्तु इसका तात्पर्य न समझकर यह कहने लगना कि उस काल में हमारे पूर्वज अस्थि के आयुधों को प्रयोग करते थे अतएव असभ्य अवस्था में थे, परमेश्वर द्वारा दी हुई तर्कशक्ति का दुरुपयोग करना है।

भारत का पौराणिक भूगोल

डॉ. ओम दत्त सरोच

पुराण भारतीय धर्म, दर्शन, कला, संस्कृति एवं इतिहास के ज्ञान का मुख्य स्रोत हैं। भारत की प्राचीन ज्ञान परम्परा का दर्शन पुराणों में होता है। भारत के प्राचीन स्वरूप एवं भूगोल व इतिहास का विस्तार से वर्णन पुराणों में मिलता है। भौगोलिक दृष्टि से अखण्ड भारत का दर्शन पुराणों में होता है।

पुराणों के अनुसार इस ब्रह्माण्ड में चौदह लोक हैं। छः लोक पृथ्वी से ऊपर तथा सात लोक पृथ्वी से नीचे स्थित हैं। भूलोक ब्रह्माण्ड के मध्य में है। ये चौदह लोक इस प्रकार से हैं - भूलोक, भुवः लोक, स्वःलोक, तपःलोक, जन लोक, महःलोक तथा सत्यलोक, ये पृथ्वी से ऊपर हैं।[१] पृथ्वी से नीचे के सात लोक हैं - अतल, वितल, नितल, गभस्तिमान, महातल, सुतल तथा पाताल।[२] इन चौदह लोकों में भूलोक ही पृथ्वी लोक है, जिस पर हम रहते हैं। भूलोक के भूगोल के अन्तर्गत इसके द्वीपों, खण्डों, वर्षों, पर्वतों, वनों, नदियों एवं देशों का विस्तृत वर्णन विभिन्न पुराणों में किया गया है। भारत वर्ष को केन्द्र बिन्दु मान कर ही भूमण्डल का वर्णन हुआ है।

इस भूमण्डल में सात द्वीप तथा नौ वर्ष हैं। सात द्वीपों के नाम इस प्रकार हैं– जम्बू द्वीप, प्लक्षद्वीप, शल्मल द्वीप, कुश द्वीप, क्रौञ्च द्वीप, शाक द्वीप तथा पुष्कर द्वीप।[३] हमारा भारतवर्ष जम्बूद्वीप में स्थित है। जम्बूद्वीप भूमण्डल के मध्य में स्थित है। इस प्रकार भूमण्डल का केन्द्र जम्बूद्वीप को ही माना गया है। पृथ्वी के सात द्वीपों की अवधारणा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। वर्तमान सात महाद्वीपों की भौगोलिक स्थिति तथा पुराण वर्णित सात द्वीपों की स्थिति के सम्बन्ध में अन्तर हो सकता है, परन्तु वह स्पष्ट है कि वर्तमान एशिया महाद्वीप का अधिकतर भाग प्राचीन जम्बूद्वीप के अन्तर्गत ही आता है।

इन सात द्वीपों के अतिरिक्त भूमण्डल के नौ वर्षों के रूप में भी विभाजन किया गया है, जो कि इस प्रकार से हैं– भारत वर्ष, किम्पुरुष वर्ष, हरि वर्ष, रम्यक वर्ष, हिरण्यगर्भ वर्ष, उत्तर कुरु वर्ष, इलावृत वर्ष, भद्राश्ववर्ष तथा केतुमाल वर्ष। ये वर्ष संभवतः उपद्वीप या उपखण्ड है।[४] पृथ्वी के इन नौ वर्षों (उपखण्डों) में भारतवर्ष प्रथम वर्ष है, जो कि जम्बूद्वीप में स्थित है। इस की स्थिति विष्णु-पुराण के अनुसार हिमालय के दक्षिण तथा समुद्र के उत्तर में बताई गई है।[५] ब्रह्माण्ड पुराण, वायु पुराण, अग्नि पुराण, नारद पुराण में भी इसी तरह का उल्लेख मिलता है। इन पुराण प्रसंगों के अनुसार भारत की उत्तरी तथा दक्षिणी सीमा तो बताई गई है, परन्तु पूर्वी और पश्चिमी सीमा का उल्लेख नहीं है। भारतवर्ष का विस्तार नौ हजार योजन बताया गया है। उत्तर में काश्मीर तथा दक्षिण में कन्याकुमारी

तक भारत की सीमा निर्धारित होती है। पूर्वी तथा पश्चिमी सीमा के निर्धारण के लिए पुराणों में बताए गये भारतवर्ष के अन्य खण्डों (द्वीपों) पर विचार करना होगा। भारत के नौ द्वीप (खण्ड) बताये गये हैं जो इस प्रकार से हैं – इन्द्र द्वीप, कसेरू द्वीप, ताम्रपर्ण द्वीप, गभस्तिमान द्वीप, नागद्वीप, सौम्य द्वीप, गन्धर्व द्वीप तथा बारूण द्वीप हैं। [६]

इन्द्र द्वीप वर्तमान अण्डेमान को माना जाता है। कसेरू द्वीप की स्थिति के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। आर.सी. मजूमदार की मान्यता है कि वर्तमान मलयद्वीप ही कसेरू द्वीप है। डॉ. एम.एस. अली ने 'ज्योग्राफी ऑफ पुरान्स' नामक पुस्तक में कसेरू द्वीप की स्थिति गोदावरी तथा महानदी के बीच मानी है। पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ने कसेरू को एक कन्द माना हैं, तथा इस कन्द की बहुतायत वाले 'सेलेबीज' द्वीप को कसेरू द्वीप माना है।[७] उनका यह मत तर्कसंगत लगता है, क्योंकि जिस प्रकार जम्बू फलों के कारण जम्बूद्वीप नामकरण हुआ है, उसी तरह कसेरू कन्द के कारण कसेरू द्वीप नाम पड़ा होगा। ताम्रपर्ण द्वीप का उल्लेख महाभारत में भी मिलता है। पाण्डव सहदेव ने इस द्वीप को जीता था।[८] वर्तमान में इसे सिंहल द्वीप या श्रीलंका के रूप में जाना जाता है। गभस्तिमान खण्ड की स्थिति स्पष्ट नहीं हैं। डॉ. अली के अनुसार नर्मदा और गोदावरी के बीच का पर्वतीय क्षेत्र ही गभस्तिमान द्वीप हैं।[९] पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी सेलेबीज द्वीप के पूर्व में मल्लका द्वीप को ही गभस्तिमान द्वीप स्वीकारते हैं।[१०] 'गभस्ति' शब्द का अर्थ सूर्य-किरण तथा गभस्तिमान का अर्थ सूर्य होता है। इस दृष्टि से सूर्य की किरणें जहां अधिक तथा पहले पड़ती हैं, वही द्वीप गभस्तिमान हो सकता है। इस से इसका पूर्व में होना तर्कसंगत लगता है। अतः मल्लका या मलाया ही गभस्तिमान द्वीप है, ऐसा माना जा सकता है। नाग-द्वीप को नागेश्वर द्वीप भी कहा जाता है। बंगाल की खाड़ी में स्थित निकोबार द्वीप ही नागद्वीप माना जाता है। थाईलैण्ड जिसका पुराना नाम स्याम देश था, वही पौराणिक सौम्य द्वीप माना जाता है। इस द्वीप (खण्ड) की स्थिति वर्तमान भारत से बाहर है। गन्धर्व देश की स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार भरत ने गन्धर्व देश को जीता था।[११] कालिदास के अनुसार सिन्धु देश का ही एक अंग गान्धार देश था।[११] यही गान्धार गन्धर्व देश माना जाता है। महाभारत में प्रसिद्ध गान्धारी देश की राजकुमारी थी। महाभारत के अनुसार कैलाश मानसरोवर के पास गन्धर्व देश स्थित है।[१३] गन्धर्व जाति का सम्बन्ध संगीत से रहा है। हिमालय क्षेत्र के निवासी संगीत प्रिय रहे हैं, अतः गन्धर्व देश हिमाचल क्षेत्र में ही कहीं स्थित हो सकता है। वरुण द्वीप या वारूणद्वीप के सम्बन्ध में विभिन्न मत हैं। वरुण को जल का देवता माना जाता है। अतः अधिक जलवाला प्रदेश वारुण द्वीप ही सकता है। सहस्रबाहू नामक राजा ने वरुण द्वीप को जीता था। सहस्रबाहू का सम्बन्ध नर्मदा नदी के मध्य क्षेत्र से रहा है। अतः पश्चिमी घाट के आस-पास ही वरुण द्वीप रहा होगा, ऐसा माना जा सकता है।[१४]

इस प्रकार इन उल्लेखों से स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतवर्ष, बृहद् भारत था। वर्तमान भारत से भी बाहर सुदूर पूर्व तक भारत का विस्तार था। थाईलैंड, मलाया, श्रीलंका आदि तक तथा दूसरी ओर अफगानिस्तान तथा उस से भी आगे तक का भू-भाग बृहद् भारत में सम्मिलित था।

भारतीय धर्म, संस्कृति आदि की स्पष्ट छाप आज भी इन देशों की संस्कृति में मिलती है। जिससे बृहद् पौराणिक भारत की स्थिति स्पष्ट होती है।

संदर्भ :

१. विष्णु पुराण - २.७.१६-२०.

२. अतलं वितलं चैव नितलं च गभस्तिमान्।
महातलाख्यं सतलं चाग्रयं पातालं चापि सप्तमम्।। वि.पु. २.५.२.

३. जम्बूप्लक्षाख्यौ द्वीपों शाल्मलश्चापरो द्विज।
कुशः क्रौंचश्च तथा शाकः पुष्करश्चैव सप्तमः।। वि.पु. २.२.५

४. भारतं प्रथमं वर्षं ततः किम्पुरुषं स्मृतम् ....वि.पु. २.२.१३.२४

५. उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्। वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र संततिः। वि.पु. २.३.१

६. भारतस्यास्य वर्षस्य नवभेदान्निशामय। इन्द्रद्वीपः कसेरूश्च ताम्रपर्णों गभस्तिमान्।। नागद्वीपो तथा सौम्यो गन्धर्वस्त्वथ वारूणः...............वि. पु. २.३.६,७

७. पुराण परिशीलन - पं. गिरधर शर्मा चतुर्वेदी .... पृ. ३११-१२

८. महाभारत सभापर्व २८.५.

९. ज्योग्राफी ऑफ पुरान्स - डॉ. अली - पृ. १३०

१०. पुराण परिशीलन - पं. गिरिधर चतुर्वेदी - पृ. ३१२

११. रामायण उत्तर काण्ड - १०१-११.

१२. रघुवंशम् - १५-८७, ८८.

१३. महाभारत - सभापर्व - २८.५.

१४. ज्योग्राफी ऑफ पुरान्स - १२८-३०

प्राचार्य
संस्कृत महाविद्यालय,
चकमोह, जिला हमीरपुर (हि.प्र.)

भारतवर्ष की इतिहास दृष्टि

गुंजन अग्रवाल

नामूंल लिख्यते किंचित् नामूलं वदते क्वचित्।'

- मल्लिनाथ (रघुवंश की टीका)

इतिहास क्या है? इतिहास-शिक्षण का उद्देश्य क्या है? इतिहास के प्रति दृष्किोण क्या होना चाहिए? प्राचीन भारत में इतिहास-लेखन की परम्परा क्या थी? भारतीय-इतिहास का पुनर्लेखन क्यों?— ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं, जो भारतीय-समाज में न केवल बुद्धिजीवियों को परेशान कर रहे हैं, बल्कि देश के राजनीतिज्ञ भी इससे भयभीत हैं; और देश का सामान्य व्यक्ति भी कौतूहलपूर्वक इतिहास में चल रही रस्साकशी को देख रहा है ।

हमारी मान्यता है कि इतिहास किसी भी राष्ट्र का प्राण है। राष्ट्रात्मा का ज्ञान और राष्ट्र-शरीर का कर्म उसी पर निर्भर है। वह सभ्यता का आधार एवं संस्कृति का प्रधान अंग है । भविष्य के निर्माण में इतिहास का सहयोग अनिवार्य रूप से रहा करता है। इसलिए यदि इतिहास की उपेक्षा की गयी, तो राष्ट्र का पतन अवश्यंभावी होता है। अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त इतिहासविद् **डॉ. हरवंशलाल ओबराय** (१९२५-१९८३) कहा करते थे कि ''इतिहास एक राष्ट्र के उत्थान-पतन की तथ्यपूर्ण गाथा है। **'राष्ट्रस्यचक्षु इतिहासमेतत्'** अर्थात् इतिहास राष्ट्र का चक्षु है, जिसके द्वारा राष्ट्र अपने अतीत को पहचानकर वर्तमान में कर्म के लिए प्रेरणा प्राप्त करता है तथा श्रेष्ठतर भविष्य के निर्माण के लिए साधना करता है।[1] दूसरे शब्दों में, इतिहास उस कालचक्र का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक लेखा-जोखा है, जहाँ एक ओर आनेवाली पीढ़ी अपने पूर्वजों की महानता पर गर्व का अनुभव कर सके, तो दूसरी ओर उस समय की गई ग़लतियों और त्रुटियों का भी यथार्थ विश्लेषण हो, ताकि उनको मिटाकर गौरवशाली भविष्य का निर्माण किया जा सके।[2]

जब तक कोई राष्ट्र अपने इतिहास का चिन्तन करता रहता है, उससे प्रेरणा ग्रहण करता रहता है, तब तक उसकी प्रगति में बाधा नहीं आती । किन्तु जब कोई राष्ट्र अपने इतिहास को भूलता है, उससे कट जाता है, जब वह अपने महापुरुषों की, अपने देश की उपलब्धियों की और अपनी कमज़ोरियों की ठीक मीमांसा नहीं कर सकता, तब वह कभी आगे नहीं बढ़ पाता।[3] संसार के सभी सभ्य राष्ट्र इस तथ्य को भली-भाँति समझते हैं और अपने-अपने इतिहास के सहारे प्रगति करते हुए, अपने आचरण के द्वारा, अपने इतिहास-प्रेम को प्रदर्शित करते हैं ।

इतिहास की भारतीय संकल्पना

इतिहास केवल शब्द-मात्र नहीं है। वह अपने भीतर एक गूढ़ अर्थ धारण किए हुए है।

महाभारत युद्ध (३१३६-३१३८ ई पू.) से लगभग दो सौ वर्ष पश्चात् आचार्य शौनक लिखते हैं —

इतिहासः पुरावृत्त ऋषिभिः परिकीर्त्यते ।[४]

अर्थात्, 'इस विषय का इतिहास अथवा पुरावृत्तऋषियों द्वारा कीर्तित है।' निरुक्त (२.३.१) पर भाष्य करते हुए दुर्गाचार्य 'इतिहास' शब्द पर लिखते हैं —

निदानभूतः ह एवमासीत् इति य उच्यते स इतिहासः ।[५]

अर्थात्, 'यह निश्चय से इस प्रकार हुआ था, यह जो कहा गया है, वह इतिहास है।'

इस प्रकार इतिहास शब्द इति+ह+आस से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है— निश्चित रूप से ऐसा ही हुआ था। अर्थात् अतीत की घटनाओं की ठीक उसी प्रकार व्याख्या करना जिस प्रकार वे घटित हुई थीं— सच्चा इतिहास-वाचन है। कल्पित, अनुमानित और संदिग्ध बातें इतिहास नहीं हैं और न केवल व्यक्तियों के राग, द्वेष, संघर्ष, गुण, अवगुण आदि की व्याख्या ही इतिहास है। इतिहास सत्यान्वेषण है, सत्यानुसन्धान है। इतिहास के इस अर्थ पर ध्यान देने से ज्ञात होगा कि संसार में भारतवर्ष ही एकमात्र ऐसा देश है, जहाँ के मनीषियों ने इतिहास के अर्थ और मर्म— दोनों को समझा और अनुभव किया था। यही एकमात्र ऐसा देश है, जहाँ इतिहास की एक सुनिश्चित परिभाषा दी गई है—

धर्मार्थकाममोक्षाणामुपदेशसमन्वितम् ।
पूर्ववृत्तकथायुक्तमितिहासं प्रचक्षते ।।[६]

अर्थात्, 'धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के उपदेश सहित, कथायुक्त प्राचीन वृत को ही 'इतिहास' कहा जाता है।'

आर्यादिबहुव्याख्यातं देवर्षिचरिताश्रयम् ।
इतिहासमिति प्रोक्तं भविष्याद्भुतधर्मभाक् ।।[७]

अर्थात् ऋषियों द्वारा कहे गए नाना उपदेश, देवताओं और ऋषियों के चरित्र तथा अद्भुत धर्मकथाओं वाला ग्रन्थ इतिहास कहलाता है।

इतिहास का उद्देश्य

इतिहास की उपर्युक्त परिभाषा से यह स्पष्ट हो जाता है कि इतिहास में केवल पूर्वकाल की घटनाओं व तथ्यों का संकलन-मात्र ही नहीं, बल्कि उसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का उपदेश भी होना चाहिये। किस राजा ने कब युद्ध किया, कौन जीता, कौन हारा, किसने कौन-सा देश अपने अधिकार में कर लिया, सन्-संवत्-समय, केवल इन्हीं बातों को हमारे पूर्वज 'इतिहास' नहीं कहते थे। जब तक उसमें धर्म और मोक्ष का उपदेश न हो, तब तक पूर्वकथा होने पर भी कोई ग्रन्थ 'इतिहास' नहीं कहलाता था। दुर्योधन, कंसादि राजाओं का प्रजा को पीड़ा पहुँचाने से किस प्रकार नाश हुआ और राजा रघु, राम आदि महात्मा नृपतिगणों ने प्रजापालन में तत्पर होकर कैसी-कैसी सिद्धियाँ प्राप्त कीं, राजा लोग प्रजा को सुरक्षित और सुखी रखने के लिये कैसे-कैसे यत्न करते थे, ये सब विषय इतिहास के अंतर्गत हैं। आश्रमवासी ऋषिमुनिगण संसार की ममता छोड़कर भी राजा और प्रजा के कल्याण की

कामना करते थे। इसी प्रकार प्रजा के पालन व दुष्टों के दमन में धर्म से वृद्धि और अधर्म से नाश स्पष्ट रूप से दिखाना ही इतिहास का प्रधान उद्देश्य है।

इतिहास में सम्पूर्ण ज्ञातव्य विषय होने चाहिये। किस राजा के समय में प्रजा की क्या अवस्था थी, राज्य में किस प्रकार वाणिज्य-व्यापार होता था, विद्या की चर्चा, प्रजाजन का सुख, राजा का धन व बल, ज्ञान की वृद्धि और उसी के साथ धर्माचरण और कर्तव्य का उपदेश व अकर्तव्य का निषेध एवं मोक्षधर्म की शिक्षा-प्रणाली इत्यादि विषय इतिहास में होने चाहिये।

'साहित्यदर्पण' (कलकत्ता संस्करण) में ग्रन्थकार ने सूचित किया है कि 'इतिहास पाठ करने का फल यह है कि पढ़नेवाला व्यक्ति राम आदि की भाँति बर्ताव करने का यत्न करे और रावणादि दुष्टों के चरित्र से घृणा करे और यदि चरित्र वैसा दूषित हो तो उसे छोड़ने का यत्न करे।' **धर्मसम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज** (१६०६-१६८२) ने भी लिखा है कि 'बुरी घटनाओं का वर्णन बुरे कामों से बचने और सावधान करने के लिये होता है तथा अच्छी घटनाओं का वर्णन गुणग्रहण एवं प्रोत्साहन के लिये होता है। इसीलिये रामायण के अध्ययन से यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये कि राम-भरत आदि के समान बर्तना चाहिये, रावणादि की तरह नहीं। महाभारत पढ़कर यह पाठ सीखना चाहिये के युधिष्ठिर के समान बर्ताव करना चाहिये, दुर्योधन आदि के समान नहीं— **रामादिवद् वर्त्तितव्यं न रावणादिवत्। युधिष्ठिरादिवद् व्यवहर्तव्यं न दुर्योधनादिवत्।।**[८,६] कहने का तात्पर्य यह है कि जब तक इतिहास के प्राचीन आदर्शों से सबक लेकर यदि वर्त्तमान शासन-सुधार के लिए हम कोई कदम न उठाएँ, तो इतिहास पढ़ने का और लिखने का लाभ ही क्या? इतिहास इस तरह से लिखा और पढ़ा जाना चाहिए जिससे प्राचीन ग़लतियों से बचा जा सके और अतीत के गौरव का अनुकरण किया जा सके।[१०] अन्यथा केवल सन् एवं संवत् रट लेने से इतिहास पढ़ने का कोई लाभ नहीं।

भारतीय-इतिहास के गौरव-ग्रन्थ

इतिहास की उपर्युक्त परिभाषा और उद्देश्य के अनुसार अष्टादश महापुराण[११], अष्टादश उपपुराण[१२], ३६ अन्य पुराण-ग्रन्थ[१३], रामायण[१४] एवं महाभारत[१५] ग्रन्थ इतिहास के अंतर्गत हैं और जितने भी नवीन 'तवारीख़' और 'हिस्ट्री (History) हैं, जिनमें धर्म और मोक्ष के उपाय वर्णित नहीं हैं, वे 'इतिहास' नहीं कहे जा सकते ।

सुप्रसिद्ध दार्शनिक-विचारक श्रीश्रीआनन्दमूर्ति (प्रभात रंजन सरकार : १६२१-१६६०) ने उल्लेख किया है कि आजकल लोग जिसे 'इतिहास' (History) कहते हैं, वह वास्तव में 'इतिकथा' है। इतिकथा है घटनावलियों का क्रमिक समाहार, घटनाओं का क्रमिक पंजीकरण, छिन्न-विच्छिन्न घटनाओं का एक धारावाहिक विवरण। इस पंजीकरण से लोक-शिक्षा हो भी सकती है, नहीं भी हो सकती है। इसका लक्ष्य लोक-शिक्षा नहीं है। भिन्न-भिन्न राजाओं के जन्म और मृत्यु की तिथि कंठस्थ करने से किसी का कुछ भी भला नहीं होता, पर सामयिक जीवन की धाराएँ किसी विशेष समय में अथवा जीवन के किसी विशेष पक्ष में समाज किस प्रकार आगे बढ़ा, इसका कुछ ज्ञान 'इतिकथा' से अवश्य हो जाता है। इतिकथा के अध्ययन से पुराकालीन सामाजिक अवस्था के बारे में जाना जा

सकता है, वर्तमान से उसकी तुलना की जा सकती है। संस्कृत में इतिकथा के अनेक पर्यायवाची शब्द हैं, जैसे– 'पुराकथा', 'इतिवृत्त' इत्यादि। परन्तु अंग्रेज़ी में इसके लिए केवल एक ही शब्द है– 'History' (हिस्ट्री)।[१६]

'इतिहास' इतिकथा का सोद्देश्य विकसित रूप है। इतिकथा-लेखन के जिस रूप में शिक्षागत मूल्य सन्निहित हो, उसे ही इतिहास कहते हैं। स्कूल-कॉलेज़ों के पाठ्यक्रमों में जो 'भारत का इतिहास', 'ब्रिटेन का इतिहास', 'यूरोप का इतिहास' कहकर पढ़ाया जा रहा है, वह वास्तव में इतिकथा है, इतिहास नहीं। इतिकथात्मक सारी रचनाएँ 'इतिहास' नहीं हैं। इतिहास-लेखन सोद्देश्य होता है, जबकि इतिकथा प्रामाणिक पंजीकरण-मात्र होती है।[१७] यह उद्देश्य ऊपर बताया जा चुका है।

पुराण भारत के इतिहास-ग्रन्थ हैं

इतिहास एवं पुराण-इन दोनों शब्दों से इतिहास का ही बोध होता है। अर्थात् इतिहास एवं पुराण एक दूसरे के पर्यायवाची हैं। परन्तु प्रायः अपने देश के तथाकथित दिग्गज विद्वान् पुराणों का अर्थ अंग्रेज़ी के 'माइथोलॉज़ी' (Mythology) के हिंदी-अनुवाद के रूप में स्वीकार करते हैं। 'माइथोलॉज़ी' शब्द 'मिथ' (Myth) से बना है । और 'मिथ' का अर्थ है 'मिथ्या' अर्थात् जिसका कोई अस्तित्व न हो। इस प्रकार समस्त पौराणिक साहित्य को 'माइथोलॉज़ी' अर्थात् 'मिथ्या', अर्थात् काल्पनिक घोषित करके हमारे प्राचीन इतिहास को मानों हवा में उड़ा दिया गया है।

परन्तु हमारी मान्यता है कि हमारे पुराण हमारा इतिहास हैं। यह सत्य है कि वे हमारा काव्य भी हैं। काव्य में कल्पना का समावेश अवश्य होता है, किन्तु हमारा पौराणिक काव्य इतिहासाश्रित है, उसमें काव्यात्मक कल्पना का मिश्रण नहीं हुआ है। पौराणिक-साहित्य में स्थान-स्थान पर इतिहास को पुराण से सम्बद्ध किया गया है–

इतिहासपुराणैस्तु निश्चयोऽयं कृतः पुरा।[१८]
इतिहासपुराणानि श्रुत्वा भक्त्या द्विजोत्तमाः।[१९]
इतिहासपुराणाभ्यां न त्वन्यत् पावनं नृणाम्।[२०]
इतिहासपुराणानि श्रुत्वा भक्तया विशेषतः।[२१]
इतिहासपुराणानि पंचमं वेदमीश्वरः।[२२]
सूतं जग्राह शिष्यं स इतिहासपुराणयो।[२३]
इतिहासपुराणे च तथा व्याकरणं प्रभो।[२४]
इतिहासपुराणज्ञं वेदवेदांगपरम्।[२५]
इतिहास पुराणं च वेदांश्चैव विचक्षणः।[२६]
इतिहासपुराणानि वाचयित्वातिवाहयेत्।[२७]
इतिहासपुराणाभ्यां कञ्चित्कालं नसेद् बुधः।[२८]
इतिहासपुराणानि कल्पोऽहं कल्पना ह्ययम्।[२९]
इतिहासपुराणादि शिवपुस्तकवाचनम्।[३०]

केवल पुराणों में ही नहीं, अपितु अन्यान्य आर्ष-ग्रन्थों में भी इतिहास को पुराण एवं पुराण

को इतिहास ही कहा गया है। वेदों में कहा गया है–

तमितिहासश्च पुराणं च गाथाश्च नाराशंसीश्चानुव्यचलन्।[३१]

इतिहासस्य च वै स पुराणस्य च गाथानां, च नाराशंसीनां च प्रियं धाम भवति च एव वेद।।[३२]

इतिहासपुराणम्[३३]

इतिहासपुराणं च[३४]

इतिहासपुराणं गाथा नाराशंसीरित्यहरहः स्वाध्यायमधीते।[३५]

इतिहासपुराणं पुष्पं[३६]

ते वा एतेऽथर्वांगिरस एतदितिहासपुराणमभ्यतपंस्तस्याभितप्तस्य।[३७]

चतुर्थमितिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदं[३८]

इतिहासपुराणः पंचमो वेदानां वेदः[३९]

स्मृतियों में कहा गया है–

इतिहासपुराणाद्यैः षष्ठश्च सप्तमं नयेत्[४०]

इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्[४१]

इतिहासपुराणं वा कथयेच्छृणुयाच्च वा।[४२]

इतिहासपुराणाभ्यां गीतवाद्यैः प्रबन्धकैः।[४३]

इतिहासपुराणानि सर्वतः परिपूजयेत्।[४४]

इतिहासपुराणानां वेदोपनिषदां द्विज।[४५]

इतिहासपुराणानि स भवेद्वेदपारगः।[४६]

'महाभारत' में कहा गया है–

इतिहासपुराणाभ्यां वेदार्थमुपबृंहयेत्[४७]

इतिहासपुराणेषु नानाशिक्षासुचाभिभो।[४८]

इतिहासपुराणार्थं कात्स्नर्येन विदितास्तव।[४९]

अन्यत्र कहा गया है–

प्रमाणेन खलु ब्राह्मणेन इतिहासपुराणानां प्रामाण्यमनुज्ञायते।[५०]

वेदागमपुराणेतिहास शास्त्रादयोऽखिलाः।[५१]

तस्मात् समूलमितिहासपुराणम्।।[५२]

इतना ही नहीं, भविष्यमहापुराण में तो एक जगह स्पष्ट रूप से अंकित है कि अष्टादश महापुराण इतिहास ही हैं–

अष्टादश पुराणानि सेतिहासानि भारत।[५३]

राजशेखर ने भी पुराणों को रूपांतर से इतिहास ही माना है–

पुराण प्रविभेद एवेतिहासः।' (काव्यमीमांसा)

कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार पुराण, आख्यायिका, उदाहरणमीमांसा, धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र– इन्हें 'इतिहास' ही समझना चाहिए–

पुराणमितिवृत्तमाख्यादिकोदाहरणं धर्मशास्त्रमर्थशास्त्रंचेतीहासः[५४]

कौटिल्य ने भी इतिहास को पुराणों से संबन्ध किया है–

इतिहासपुराणाभ्यां बोधयेऽर्थशास्त्रवित् ।[५५]

कुछ विद्वानों को भ्रम है कि जिस प्रकार बाइबल, कुरान, अवेस्ता आदि धर्म-ग्रन्थ हैं, उसी प्रकार पुराण भी हिंदुओं के धर्म-ग्रन्थ हैं। लेकिन यह बात भी सही नहीं [५६], क्योंकि पुराणों में धर्मशास्त्रों को पुराणों से भिन्न बताया गया है–

अंगानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः ।
पुराणं धर्मशास्त्रां च विद्या ह्येताश्चतुर्दश ।।
आयुर्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वश्चैव ते त्रयः ।
अर्थशास्त्रं चतुर्थं विद्या ह्यष्टादशैव ताः ।।[५७]

अर्थात्, ६ वेदांग[५८], ४ वेद, मीमांसा, न्याय, पुराण, धर्मशास्त्र, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद और अर्थशास्त्र– ये १८ विद्याएँ हैं।

महर्षि याज्ञवल्क्य ने भी लिखा है–

पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्रंगमिश्रिताः ।
वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश ।।[५९]

अर्थात्, पुराण, न्याय, मीमांसा, धर्मशास्त्र और शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष और ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद– ये १४ विद्याएँ तथा धर्म के स्थान हैं।

उपर्युक्त प्रमाण से स्पष्ट है कि धर्मशास्त्र और पुराण (इतिहास) अलग-अलग विद्याएँ हैं। इसलिए पुराण धर्मशास्त्र या धर्मग्रन्थ नहीं हैं। गोस्वामी तुलसीदास (१४९७-१६२३) ने रामकथा पर आधारित 'श्रीरामचरिमानस' की रचना भारतीय इतिहास को पुनर्जीवित करने के लिए नहीं, बल्कि धर्म को जाग्रत् करने के लिए की, इसलिए श्रीरामचरितमानस एक धर्मिक ग्रन्थ है । परन्तु पुराणों की रचना धर्म के जागरण के लिए नहीं, बल्कि इतिहास के निरूपण हेतु की गयी, इसलिए पुराण ऐतिहासिक ग्रन्थ हैं।

पुराण सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर और वंशानुचरित– इन पाँच लक्षणों से युक्त होते हैं, इसलिए भी वे ऐतिहासिक ग्रन्थ हैं–[६०]

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च ।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ।।[६१]

आज के विद्वान् यह नहीं समझते या समझना नहीं चाहते कि पुराणों का इतिहास देवलोक एवं पृथिवीलोक का सम्मिलित इतिहास है। प्राचीन सत्ययुग से द्वापर के अन्त तक भारतवासियों का देवलोक से प्रत्यक्ष सम्पर्क था। देवता यहाँ पधारते थे और मनुष्य देवलोक की सशरीर यात्रा करते थे। फलतः पुराणों में देवलोक और पृथिवीलोक का मिला-जुला वर्णन है। इस भेद को न समझकर और पूरा इतिहास पृथिवी का मानकर ये इतिहासकार देवताओं को भी पृथिवी का राजा या व्यक्तिविशेष मानने का यत्न करते हैं और घटनाक्रम का समाधान न पाकर पुराणों को 'माइथोलॉज़ी' ठहराने लगते हैं। आज का मानव वीर्यहीन, बलहीन, संकल्पहीन हो गया है। वह देवलोक की स्थिति को नहीं समझ पाता। किन्तु हमारे महान् पूर्वज केवल पाँच हज़ार वर्ष पूर्व तक देवलोक के प्रत्यक्ष सम्पर्क में रहे हैं।

पुराणों के इतिहास को यह समझकर ही देखने से ठीक तात्पर्य ज्ञात होगा ।

इतिहास के संबंध में पुराणों की दीर्घकालीन तपस्याएँ, दीर्घायु, दीर्घाकृतियाँ, विशाल संख्याएँ भी विद्वानों को उलझन में डालती हैं। दीर्घायु के संबंध में तो कुछ कहना ही नहीं है। मनुष्य उत्तरोत्तर अल्पजीवी होता जा रहा है। समाचार-पत्रों में नौ, दस तथा पाँच वर्ष की लड़कियों के सन्तान होने की बात छप चुकी है। आज भी सवा सौ-डेढ़ सौ वर्ष के व्यक्ति जीवित हैं और तब भी साठ-सत्तर वर्ष की आयु लम्बी मानी जाती है। जब सौ-पचास वर्षों में यह स्थिति है, तब लाखों-करोड़ों वर्ष पूर्व-सत्ययुग, त्रेता और द्वापर में क्या स्थिति रही होगी, इसका श्रद्धापूर्वक अनुमान तो लगाया ही जा सकता है। किन्तु ह्रास होता है, यह देखकर भी कुतर्क करनेवाले को संतुष्ट नहीं किया जा सकता। आकृति के संबंध में भी यही बात है। विज्ञान यह स्पष्ट कहता है कि मनुष्य के आकार में, बल में ह्रास हो रहा है। अमेरिकी-जेनेटिक-विज्ञानी जॉन ग्लैड (John Glad) ने अपनी पुस्तक 'ह्यूमन फ्यूचर इवॉल्यूशन : यूज़ेनिक्स इन द ट्वंटी-फ़र्स्ट सेंचुरी' (Future human evolution: eugenics in the twenty-first century) में लिखा है कि 'आँकड़े गवाह हैं कि मनुष्य की औसत उँचाई घट रही है।' यूरोप में प्राचीन मनुष्यों की जो खोपड़ियाँ मिली हैं, वे आज के मनुष्य की खोपड़ी से लगभग ढाई गुनी बड़ी हैं। मिस्र में राजाओं के सुरक्षित शव (ममी) मिले हैं। दिल्ली के पास ही एक मानव-खोपड़ी मिली थी, जिसके नेत्रों के छिद्रों से आज के मानव का सिर सरलता से निकल सकता था। अतः पुरानी दीर्घाकृतियाँ हमारी समझ में भले न आएँ, किन्तु बुद्धि के बाहर की नहीं हैं। उनकी सत्यता का अनुमान किया जा सकता है।[६३]

एक महत्त्वपूर्ण बात और भी है कि क्या हमारे वे महान् पूर्वज, जिन्होंने भारत को जगद्गुरु के पद पर प्रतिष्ठित किया, झूठ लिखते थे? जिन पूर्वजों ने सदा-सर्वदा सत्य का ही पक्ष लिया, सत्य को ही उद्घाटित और प्रतिष्ठित किया, सत्य की ही रक्षा के लिए प्राणोत्सर्ग किया, सत्य ही जिनके लिए सबकुछ था, **सत्यमेवजयति नानृतम्**[६४], **सत्यम् वद**[६५] और **सत्यम् ब्रूयात्**[६६] ही जिनका ध्येय-वाक्य था, ऐसे महान् पूर्वजों ने बुद्धि-विलास या कण्ठ-शोषण के लिए झूठ लिखा? केवल **सत्य** की रट लगानेवाले व्यास, वाल्मीकि, भृगु, याज्ञवल्क्य, भरद्वाज, जैमिनि, पराशर, गौतम, वैशम्पायन आदि ने झूठ लिखा? क्या उक्त महर्षि झूठे, मक्कार थे? नहीं ! कदापि नहीं !! यदि पुराण 'माइथोलॉजी' हैं, रामायण और महाभारत काल्पनिक उपन्यास हैं, तो दुनिया की तमाम पुस्तकें माइथोलॉजी अर्थात् काल्पनिक हैं—ऐसा हमारा मत है ।

प्राचीन मुसलमान-लेखक सम्भव और असम्भव—सभी विषयों को एकत्र करके अपना ग्रन्थ लिखते थे। जिस बादशाह के समय में इतिहासकार विद्यमान होता था, इतिहासकार उस बादशाह की बड़ी प्रशंसा और उसके शत्रुओं की व्यर्थ निन्दा लिखता था। वह यदि ऐसा न लिखता तो उसका बनाया हुआ ग्रन्थ बादशाह की आज्ञा से नष्ट कर दिया जाता। सम्पूर्ण विषय जानकर यथार्थ लिखना मुस्लिम लेखकों को आता ही नहीं था। विशेषकर अन्य मतावलम्बियों के विषय में जानना तो और भी कठिन था एवं उस बात पर उस समय के इतिहासकार ध्यान भी नहीं देते थे। मुसलमान-बादशाह या

भारतवर्ष पर आक्रमण करने वाले विजेता, हिंदुओं के मन्दिर तोड़ते और नष्ट कर देते थे। बस इतिहासकारों ने यह लिख दिया कि क़ाफिरों का नारकीय स्थान तोड़ दिया। उन चाटुकार-इतिहासकारों ने यह भी जानने की कोशिश नहीं की कि उस मन्दिर में कौन-से देवता की मूर्ति कितनी प्राचीन थी या किस राजा अथवा धनी का बनवाया हुआ मन्दिर था। ऐसी तमाम विसंगतियाँ प्राचीन और मध्यकालीन मुस्लिम-लेखकों की पुस्तकों में भरी पड़ी हैं, और फिर भी उन्हें 'ऐतिहासिक ग्रन्थ' माना जाता है । ऐसी स्थिति में, जबकि मुस्लिम-लेखकों की पुस्तकें स्वयं में माइथोलॉजी हैं, और जिनके आधार पर भारतवर्ष का इतिहास निश्चित किया जा रहा है, हमारे पुराणेतिहास को माइथोलॉजी ठहराना कहाँ तक युक्तिसंगत है, जबकि सर विलियम ज़ोन्स (Sir William Jones : 1746-1794), हेनरी थॉमस क़ोलब्रुक़ (Henry Thomas Colebrooke : 1765-1837), कर्नल ज़ेम्स टॉड (Colonel James Tod 1782-1835) रामकृष्ण गोपाल भाण्डारकर 1837-1925), डॉ. विन्सेन्ट आर्थर स्मिथ (Dr. Vincent Arthur Smith : 1843-1920), प्रेफडरिक ईडन पार्ज़ीटर (Frederick Eden Pargiter : 1852-1927), महामहोपाध्याय डॉ. हरप्रसाद शास्त्री ;1853-1931), एडवर्ड ज़ेम्स रैप्सन (Edward James Rapson : 1861-1937), देवदत्त रामकृष्ण भण्डारकर 1875-1950) काशी प्रसाद जायसवाल (१८८१-१९३७) अनन्त सदाशिव अल्तेकर (१८८६-१९५६) हेमचन्द्रराय चौधरी (१८९२-१९५७), जयचन्द्र विद्यालंकार (१८९६-१९६३), सीतानाथ प्रधान, रंगाचार्य आदि ने अपने ऐतिहासिक ग्रन्थों, समीक्षाओं, शोध-प्रबन्धों और लेखों में पौराणिक सामग्री का भरपूर उपयोग किया है !

संस्कृत-साहित्येतिहासकार एम्. कृष्णमाचार्य ने भी लिखा है : 'भारत का अपना भली-भाँति लिखा इतिहास है और पुराण उस इतिहास तथा तिथिक्रम का दिग्दर्शन करते हैं। पुराण पवित्र धोखापट्टी नहीं हैं।' प्रख्यात इतिहास-संशोधक पुरुषोत्तम नागेश ओक (१९१७-२००७) लिखते हैं 'भारतीय-पुराणों को ढोंग की संज्ञा देना या ऐसा समझते हुए एथेन्स, कैण्डी, लन्दन या टोक्यो से प्राचीन भारतीय-ऐतिहासिक कालक्रम को निश्चित करने का यत्न करना, अधिक-से-अधिक भारतीय-इतिहास के प्रति भैंगापन ही कहा जा सकता है।'[९८] डॉ. विन्सेन्ट आर्थर स्मिथ को स्वीकार करना पड़ा है कि 'पुराणों में दी गई राजवंशावलियों की आधारभूतता को आधुनिक यूरोपीय-लेखकों ने अकारण ही निन्दित किया है; इनके सूक्ष्म अनुशीलन से ज्ञात होता है कि इनमें अत्यधिक मौलिक व मूल्यवान् ऐतिहासिक परम्परा उपलब्ध होती है।'[९९] प्रख्यात मार्क़्सवादी-लेखक डॉ. रामविलास शर्मा (१९१२-२०००) ने मार्क़्सवादी-दृष्टि से भारतीय-सन्दर्भों का मूल्यांकन अवश्य किया है, किन्तु उन्होंने भी स्वीकार किया है कि भाषा और साहित्य तथा चिन्तन की दृष्टि से भारत एक अत्यन्त प्राचीन राष्ट्र है। उन्होंने अंग्रेजों द्वारा लिखे और लिखवाए गए भारतीय-इतिहास को एक षड्यन्त्र माना है। उन्होंने लिखा है कि यदि भारत के इतिहास का सही-सही मूल्यांकन करना है तो हमें अपने प्राचीन ग्रन्थों का अध्ययन करना होगा। अंग्रेजों ने जान-बूझकर भारतीय इतिहास को नष्ट किया है। ऐसा करके ही वे इस महान् राष्ट्र पर राज कर सकते थे। भारत में व्याप्त जाति, धर्म के अलगाव का जितना गहरा

प्रकटीकरण अंग्रेजों के आने के बाद होता है, उतना गहरा प्रभाव पहले के इतिहास में मौजूद नहीं है। एडवर्ड पोकॉक् (Edward Pococke : 1604–1691) ने लिखा है : पुराणों में वर्णित तथ्य, परम्पराएँ और संस्थाएँ क्या किसी दिन स्थापित हो सकती हैं? अरे भाई, ईसवी सन् से तीन सौ वर्ष पूर्व भी उनका अस्तित्व पाया जाता है, जिससे वह बहुत प्राचीन लगते हैं, इतने प्राचीन कि उनकी बराबरी अन्य कोई भी प्रणाली कर ही नहीं सकती।[१०]

भारत का पौराणिक इतिहास संवाददाताओं के तार, टेलिप्रिंटर या समाचार-पत्रों के आधार पर या अटकलों के आधार पर नहीं बना, और न किसी मूर्ति, शिलालेख, स्तम्भों अथवा मुद्राओं के आधार पर ही बना है। रामायण, महाभारतादि आर्ष इतिहास के लेखक वाल्मीकि, व्यास आदि ऋषिजन समाधिजन्य ऋतम्भरा-प्रज्ञा के अनुसार घटनाओं को पूर्णतया जानकर ही इतिहास लिखने में संलग्न हुए थे । उन्होंने जो भी दिव्य-दृष्टि से देखा, वही लिखा। योग से ऐसा होना असम्भव नहीं, इसलिये अधूरी, भ्रान्तिपूर्ण खोजों के आधार पर पुराणों के किसी नियम को ग़लत नहीं ठहराया जा सकता, और वो भी ऐसी स्थिति में जब उनके वर्णन क्रमशः सत्य सिद्ध होते जा रहे हैं। पुराण दिव्य, अपौरुषेय और ईश्वरीय ज्ञान हैं। वे ही हिंदू-संस्कृति के प्रेरक, पोषक और भण्डार हैं। उनमें न तो विकृति आई है और न उनकी कोई बात कोरी कल्पना ही है। पुराणों के वर्णन जहाँ रूपक हैं, वहाँ उन्हें स्पष्ट रूप से रूपक बता दिया गया है, जैसे भागवतमहापुराण का 'पुरंजनोपाख्यान'। शेष वर्णन अक्षरशः सत्य हैं। वे रूपक नहीं हैं।

पुराणेतिहास में अनेक ऋषियों या प्रधान पुरुषों की चरित–संबंधी त्रुटियों के वर्णन हैं। ऐसी त्रुटियों के न करने का कहीं आदेश तो है नहीं, लेकिन सत्य को छिपाया भी नहीं गया है। इस संबंध में साधारण दृष्टि और महापुरुषों की दृष्टि में ही अन्तर होता है। महापुरुषों का दृष्टिकोण होता है कि उनकी त्रुटियाँ प्रकट हो जाने से समाज सावधन होगा। लोग समझ लेंगे कि इतनी उच्च स्थिति में भी ऐसे विकार आ सकते हैं, वे प्रमाद नहीं करेंगे। पुराणों में महर्षियों ने इसी दृष्टिकोण से त्रुटियों को छिपाया नहीं है। यदि राम केवल काल्पनिक आदर्श मात्र होते तो वाल्मीकि उनके चरित्र को रामायण के आदि से अन्त तक निष्कलंक ही रखते, छल से बालि-वध जैसी घटनाओं को कभी न लाते। वाल्मीकिरामायण को पढ़कर यह स्पष्ट हो जाता है कि कथानक की ऐतिहासिकता के संबंध में आदि-कवि को कोई संदेह न था।

पुराणों की कालगणना

पुराणों में घटनाक्रम की कालबद्ध चर्चा परार्ध, कल्प, मन्वन्तर, युग और संवत्सर में की गई है। परार्ध, कल्प, मन्वन्तर, युग और संवत्सर का प्रयोग भारत-भर के हिंदू और संसारभर में फैले प्रवासी हिंदू अपने दैनिक जीवन में **संकल्प पाठ** के अंतर्गत करते हैं। किसी भी धार्मिक कृत्य को करने से पूर्व हाथ में पुष्प, जल और अक्षत लेकर **संकल्प पाठ** किया जाता है। उसमें स्वकुल के इतिहास का और सारे विश्व के इतिहास का संक्षेप में उच्चारण किया जाता है। प्रत्येक धार्मिक कृत्य में सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर अबतक के इतिहास का पूरा ब्यौरा संक्षेप में दुहराते रहने की यह वैदिक-प्रथा इस बात

का प्रमाण नहीं कि भारतीय लोग अपने इतिहास के प्रति कितने जागरूक थे? सारे इतिहासक्रम को सारे लोगों के मन में सदैव जीवित रखनेवाली यह प्रथा पूरे विश्व में बेजोड़ है। क्या इस तथ्य से यह सिद्ध नहीं होता कि प्राचीन भारत में इतिहासविद्या अपने चरम पर थी? 'संकल्प पाठ' में कहा जाता है– **श्री ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तकदेशांतर्गते ब्रह्मावर्तेकपुण्यप्रदेशे बौद्धावतारे वर्तमाने यथानाम संवत्सरे कलियुगाब्दे........ वैक्रमाब्दे.......... शालिवाहन शके............ अमुकायने महामांगल्यप्रदे मासोत्तामे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुक तिथौ अमुकवासरान्वितायाम् अमुकनक्षत्रो...... । अर्थात् ब्रह्मा के द्वितीय परार्ध के श्वेतवाराह कल्प के वैवस्वत मन्वन्तर के २८वें कलियुग के प्रथम चरण में विक्रम संवत् .... और शालिवाहन संवत् ....** में जम्बूद्वीप के भारतवर्ष के भरतखण्ड के आर्यावर्त के अंतर्गत ब्रह्मावर्त नामक पुण्यप्रदेश में, जब अन्तिम बार भगवान् बुद्ध का अवतार हुआ था, अमुक संवत्सर के अमुक अयन के अमुक मास के अमुक पक्ष में अमुक तिथि को अमुक वार को और अमुक नक्षत्र में ....अमुक कार्य हेतु मैं संकल्प कर रहा हूँ।

यही है हमारी परम्परागत कालगणना। पुराण इसी कालगणना के अंतर्गत तथ्यों का विवरण देते हैं । इस कालगणना के अनुसार ब्रह्माण्ड की कुल आयु ३१,१०,४०,००,००,००,००० वर्षों में से १५,५५,२१,९७,२९,४९,११० वर्ष और मानव-सृष्टि की कुल आयु ४,३२,००,००,००० वर्ष में से १,९७,२९,४९,११६ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। कॉस्मोलॉजी में हुई नयी खोज से भी पृथ्वी की आयु लगभग दो अरब वर्ष ज्ञात हुई है। भारतीय वैज्ञानिक सुब्रह्मण्यम चन्द्रशेखर (१९१०-१९९४) ने भी गणना करके बताया है कि पृथ्वी की आयु लगभग दो अरब वर्ष है। सर जे जींस (१८७७-१९४६) ने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में 'आश्चर्यजनक सृष्टि विषय पर अपने व्याख्यान में बताया है कि सृष्टि को प्रारम्भ हुए लगभग दो अरब वर्ष बीते हैं। पौराणिक कालगणना और आधुनिक विज्ञान के आँकड़ों का यह मेल कितना विलक्षण है !

सृष्टि की कुल आयु (४,३२,००,००,००० वर्ष) को एक 'कल्प' कहते हैं। यह ब्रह्मा के एक दिन के बराबर होता है। दो कल्पों से ब्रह्मा का एक दिवस (अहोरात्र) बनता है। एक कल्प में सूर्य १४ बार आकाशगंगा की परिक्रमा करता है। इसलिये एक कल्प में १४ 'मन्वन्तर' कहे गए हैं। १४ मन्वन्तरों में १,००० 'चतुर्युग' होते हैं। एक चतुर्युग ४३,२०,००० वर्षो का होता है : सत्ययुग १७,२८,००० वर्ष त्रेतायुग १२,९६,००० वर्ष द्वापरयुग ८,६४,००० वर्ष कलियुग ४,३२,००० वर्ष। ऋग्वेद की अक्षर-संख्या भी ४,३२,००० है–

स ऋचो व्यौहत् । द्वादश बृहती सहस्राणि एतावत्यो हर्च्चो या प्रजापतिसृष्टाः।[७२]

अर्थात्, ऋकपदों को सञ्चित करके प्रजापति ने व्यूह बनाया । उसमें बारह बृहती सहस्र अक्षर लगे। बृहती छंद = ३६ अक्षर । इसलिये ३६ ×१२×१०० = ४,३२,०००ऋक-अक्षर ।

सत्ययुग = ४ कलियुग, त्रेतायुग = ३ कलियुग, द्वापरयुग = २ कलियुग । इस प्रकार १० कलियुग का एक चतुर्युग हुआ। इसी को सहस्र गुणित (सहस्रशीर्षा-पुरुषसूक्त) करने से एक कल्प बनता है । यही सृष्टि है । इसी तरह प्रलय भी एक कल्प के बराबर ही होता है। द गिनीज़ बुक ऑफ

वर्ल्ड रिकॉर्ड' ('The Guinness Book of World Records') ने कल्प को समय का सर्वाधिक लम्बा मापन घोषित किया है।[७३] हमारी यह कालगणना तथाकथित इतिहासकारों की कालगणना की तुलना में बहुत अधिक प्राचीन है।

पुराणों के रचयिता और रचनाकाल

काशीकेदारमाहात्म्य में कहा गया है कि वेद, आगम, पुराणेतिहास आदि सभी युगों के अनुसार अनादि हैं, भगवान् के श्वासरूप हैं । कभी वे मलीन, कभी विशद होते हैं और वे भगवान् की प्रपञ्च-लीला का वर्णन करते हैं । उनमें भूत, भविष्य तथा वर्तमान का वर्णन होता है, अतः उनमें शंका नहीं करनी चाहिये—

वेदागमपुराणेतिहासशास्त्रादयोऽखिलाः ।
अनादयः परेशस्य निःश्वासा ह्यञ्जसा स्थिराः ।।
कदाचित्कालपाकेन मलिना विशदा अपि ।
शाश्वतो भगवान् शम्भुः कल्पे कल्पे स्वयंप्रभुः ।।
प्रपञ्चाख्यां महालीलां निर्गुणोऽपि करोति च ।
या कृता तेन वै लीला तां शास्त्राणि वदन्ति हि ।।[७४]
तस्मादभूद् भविष्यच्च वर्तमानमपि द्विजाः ।
वदन्ति सूक्ष्मं शास्त्राणि तेषु शंकां न कारयेत् ।।[७५]

अन्यत्र कहा गया है—

स यथार्द्रैधग्नेिभ्याहितात्पृथग्धूमा विनिश्चरन्त्येवं वा अरेऽस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वांगिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषद्ः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानि व्याख्यानान्यस्यैवैतानि सर्वाणि निश्वसितानी ।[७६]

अर्थात्, जैसे गीली लकड़ी में अग्नि लगाने से धुआँ निकलता है, उसी प्रकार ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वांगिरस, पुराणेतिहास, विद्या (धनुर्वेदादि), उपनिषद्, श्लोक, सूत्र, मन्त्रविवरण तथा अर्थवाद— वे इस महद्भूत (परमात्मा) के ही निःश्वास हैं।'

उपर्युक्त श्लोक में ही श्रुति ने पुराणादि समस्त शास्त्रों को अपौरुषेय, अनादि बतलाया है। यह ईश्वरीय ज्ञान ब्रह्माजी को मिला। उनसे—

इतिहासपुराणानि पंचमं वेदमीश्वरः ।
सर्वेभ्य एव वक्त्रेभ्यः ससृजे सर्वदर्शनः ।।[७७]

अर्थात्, इतिहास-पुराणरूपी पाँचवें वेद को उन समर्थ, सर्वज्ञ ब्रह्माजी ने अपने सभी मुखों से प्रकट किया।

उपर्युक्त प्रमाण से स्पष्ट है कि पुराण भी अनादि ईश्वरीय ज्ञान ही हैं। वेदों की ही भाँति पुराणों की भी परम्परा प्राप्त होती है और सौ करोड़ श्लोकोंवाला एक ही मूल पुराण अधिकारी-भेद से शाखा-भेद में विस्तृत हुआ, यह भी पुराणों से ज्ञात होता है। महर्षि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास (३३वीं शताब्दी ई. पू.) ने पुराणों की नवीन रचना नहीं की। उन्होंने सृष्टि के प्रारम्भ से चले आ रहे सौ करोड़ श्लोकोंवाले पुराण को संक्षिप्त करके चार लाख श्लोकों के रूप में स्थापित किया। इन्हीं चार लाख

श्लोकों को १८ पुराणों में विभक्त करके इस भूलोक में प्रचारित किया। आज जो पुराण प्राप्त हैं, वे पिछले द्वापर के अन्त में महर्षि कृष्णद्वैपायन व्यास द्वारा व्यवस्थित किए हुए पुराण हैं।[७८] इस प्रकार प्रत्येक द्वापर से पुराण व्यवस्थित होते आए हैं। स्वयं ब्रह्माजी ने व्यास के रूप में प्रत्येक द्वापर में पुराणों का संग्रह किया है–

व्यासरूपस्तदा ब्रह्मा संग्रहार्थं युगे युगे ।
चतुर्लक्ष प्रमाणेन द्वापरे द्वापरे जगौ ।।[७९]

वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर के २८ चतुर्युगों के द्वापर में हुए व्यासों की सूची विष्णुमहापुराण[८०] में दी हुई है। व्यास-परम्परा ने पुराणों को व्यवस्थित-भर किया है, परन्तु पुराणों का समस्त वर्णन, पूरे उपदेश तथा घटनाएँ अनादि हैं। इस प्रकार पुराणों की वाणी तो व्यासकृत है, किन्तु उनका वर्णन, ज्ञानादि अपौरुषेय है, नित्य है।[८१]

वेदों का रचनाकाल

आज के तथाकथित विद्वान् पुराणों को धर्मग्रन्थ अथवा माइथॉलॉज़ी एवं वेदों को ऐतिहासिक ग्रन्थ' के रूप में निरूपित करते हैं।[८२] वेदों में से इतिहास ढूँढ़ निकालने का सिद्धान्त हमने पश्चिम से उधार लिया है। अर्थात् पश्चिम ने वेदों में देवतावाद, इतिहास, आख्यायिका-विकास, भाषाविज्ञान आदि अध्ययन के विषय हमें प्रदान किए हैं। ऋग्वेद के समय के भारत तथा उसकी धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक स्थिति को लेकर जो हज़ारों ग्रन्थ पिछले सौ वर्षों में लिखे गए हैं, उनके निर्देशक पाश्चात्य इतिहासकार ही हैं। उन्हीं की शैली का अन्धानुकरण कर भारत के आधुनिक विद्वान् इतिहास-लेखन के कार्य में जुटे हुए हैं। प्रत्येक मण्डल का संबंध एक-एक ऋषि-परिवार से बताकर तथा उन परिवारों की भौगोलिक स्थिति का निर्णय करके वे वेदों को ऐतिहासिक साँचे में ढालने का प्रयास कर रहे हैं, जबकि 'वेद अपौरुषेय हैं, उनमें एक अक्षर भी इतिहास नहीं है। उनका मनुष्यकृत होना भारतवर्ष को स्वीकार्य नहीं है । सबकुछ अतिमानवी है। उसमें उस काल की, जिसे इतिहास तिथिक्रम से नापा जा सके, गंध भी नहीं है'– यही सिद्धान्त विशुद्ध भारतीय है। यही प्राचीन भारत की विचारशैली है। भूत का निराकरण करनेवालों ने वेद का कर्तृत्व ब्रह्मा या ब्रह्म को सौंप दिया है। ऋषियों का नाम जहाँ आया है, वहाँ उनका कर्तृत्व बताने के लिए नहीं, क्योंकि मंत्रों की रचना करनेवाले को 'ऋषि' नहीं कहते। ऋषि वे हैं, जो मंत्रों का दर्शनमात्र करते हैं।[८३] यास्कराचार्य ने भी स्पष्ट लिखा है

ऋषिर्दर्शनात् । स्तोमान्ददर्शेत्यौपमन्यवः । तद्यदेनांस्तपस्यमानान् ब्रह्म स्वयम्भ्वभ्यानर्षत् तदृषीणामृषित्वम् ।'[८४]

अर्थात्, वेदों में प्रयुक्त स्तुति आदि विषयक मन्त्रों के वास्तविक अर्थ का साक्षात्कार करनेवाले को ही 'ऋषि' के नाम से पुकारा जाता है । तपस्या या ध्यान करते हुए जो इन्हें स्वयम्भू नित्यवेद के अर्थ का ज्ञान हुआ, इसलिए वे 'ऋषि' कहलाए और वेदमन्त्रों का रहस्य-सहित अर्थ-दर्शन ही उनका ऋषित्व है ।

जैमिनीयन्यायमाला (माधवाचार्यकृत) वेदापौरुषेयत्वाधिकरण में उत्तरपक्ष इस प्रकार है–

पौरुषेयं न वा वेदवाक्यं स्यात्पौरुषेयता।
काठकादि समाख्यानाद्वाक्यत्वाच्चान्यवाक्यवत्।।
समाख्याध्यापकत्वेन वाक्यत्वं तु पराहतम्।
तत्कर्त्रनुपलम्भेन स्यात्ततोऽपौरुषेयता।।[८५]

अध्ययनसंप्रदायप्रवर्तकत्वेन समाख्योपद्यते। कालिदासादिग्रन्थेषु तत्तात्सर्गावसाने कर्तार उपलभ्यन्ते। तथा वेदस्यापि पौरुषेयत्वे तत्कर्तोपलभ्येत न चोपलभ्यते। अतो वाक्यत्वहेतुः प्रतिकूलतर्कपराहतः। तस्मादपौरुषेयोः वेदः। तथा साति पुरुषवृद्धिदोषकृतस्याप्रामाणस्यनाशानां कनीयत्वाद्विधिवाक्य धर्मे प्रामाण्यं सुस्थितम्।

तैत्तिरीयारण्यक की व्याख्या में भट्ट भास्कर ने लिखा है–

अथ नमऋषिभ्य मंत्रऔदिभ्यो द्रष्टुभ्यः। दर्शनमेव कर्तव्यम्।[८६]

मनुस्मृति की व्याख्या में कुलार्क भट्ट ने लिखा है–

'ब्रह्माद्या ऋषिपरियन्ता स्मारकाः न कारकाः।

अर्थात्, ब्रह्मा से लेकर आजतक सभी ऋषि वेद-मन्त्रों को स्मरण रखनेवाले व पढ़ने-पढ़ानेवाले रहे हैं, कोई भी उनका कर्ता, लेखक या रचयिता नहीं है।

यह सामर्थ्य उन्हें प्रतिविशिष्ट तप से प्राप्त हुआ था। आपस्तम्ब को यह खेद है कि कलिकाल में साक्षातकृतधर्मा ऋषियों का अभाव हो गया है, इस कालवाले, जो विज्ञान-शक्ति और तप में निकृष्ट हैं, मंत्रों का उपदेश अर्थात् अध्यापन कर रहे हैं–

तस्मादृषयोऽवरेषु न जायन्ते नियमातिक्रमात्।[८७]

यही बात यास्कराचार्य ने भी कही है–

साक्षातकृतधर्माणऋषयो बभूवुः।
तेऽवरेभ्योऽसाक्षातकृतधर्मभ्य उपदेशेन मन्त्रान्संप्रादुः।[८८]

वेदों को 'अनुश्रव' भी कहते हैं, जिसका अर्थ ही यह है कि वे गुरु-परम्परा से ही सुने जाते हैं। उनका निर्माण नहीं होता। कौषीतकिब्राह्मण[८९] का मत है कि वेद के मन्त्र तपःपूतऋषियों द्वारा आविर्भूत हुए हैं या देखे गये हैं, बनाये नहीं गये। ऐतरेयब्राह्मण[९०] का कहना है कि गौरवीति ने सूत्रों या मन्त्र-समूहों को देखा था। मनु, व्यास आदि सभी वेदों की नित्यता को स्वीकार करते हैं। ऋग्वेद के 'वाचा विरूपनित्यया'[९१]– इस मन्त्र से; **तैत्तिरीयब्राह्मण के पूर्वे पूर्वेभ्यो वच एतदूचुः**[९२]– इस मन्त्र से, ब्रह्मसूत्र के **शब्द इति चेन्नातः प्रत्यक्षानुमानभ्याम्**[९३] **एवं अत एव च नित्यत्वम्**[९४]– इन सूत्रों से, महाभारत के **अनादिनिधना विद्या वागुत्सृ स्वयम्भुवा**[९५] एवं विष्णुमहापुराण के **प्राजापत्या श्रुतिर्नित्या तद्विकल्पास्त्विमे द्विज**[९६]आदि श्लोकों से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि वेद अपौरुषेय हैं। वे कभी भी मनुष्य-विशेष द्वारा लिखे नहीं गये। उन्हें कंठगान के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को संप्रेषित किया जाता था। इसलिये उन्हें 'श्रुति' भी कहा गया, अर्थात् सुनने-सुनाने का ग्रन्थ। ब्रह्मा की प्रत्येक सृष्टि (कल्प) के प्रत्येक मन्वन्तर के हर चतुर्युग के द्वापर में व्यास-परम्परा द्वारा वेदों को सुरक्षित रखा जाता है। ये व्यासऋषि वेदों में धन, जटा, माला, शिखा आदि अनेक पाठों की व्यवस्था करके उन्हें ज्यों-का-त्यों

बनाए रखते हैं। इसलिये भारतवासियों के लिये वेद-ज्ञान सनातन, अपौरुषेय, अमर, अनन्त अर्थात् त्रिकालातीत हैं। 'वेद भूतकाल के लिए थे, किसी युग-विशेष के मस्तिष्क की उपज थे और उसी समय के समाज के लिये उनका उपयोग होता था' इत्यादि बातें पाश्चात्य और उनके पदानुगामी भारतीय विद्वानों के मस्तिष्कों में सबसे पहले आती हैं। भारतवर्ष का जो स्वदेशी जीवन है, उसके रोम-रोम में वेद अब भी विद्यमान है। हमारे समस्त संस्कार, नित्यकर्म अब भी उन्हीं वेद-मंत्रों से होते हैं, जिन्हें **पूर्वे पूर्वजनाः, पूर्वेऋषयः** अब से पाँच या दस या बीस हज़ार वर्ष या १,९७,२९,४९,११९ वर्ष पूर्व गाते थे।[९७]

कुछ विद्वान् वेदों को बीस या तीस हज़ार वर्ष पुराना कहकर बड़े प्रसन्न होते हैं। परन्तु यह भाव भी भारतवर्ष के परम्परागत विचार के विरुद्ध है। वेदों को पाँच हज़ार वर्ष पुराना कहें या बीस हज़ार वर्ष, उससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। इन दोनों का ही आर्य-अनुश्रुति से विरोध है। हिंदू-भाव तो वेदों को सनातन मानता है।[९८]

आज जो यूरोप सोचता है, उसी की छाया भारतीय विद्वान् सर्वत्र ढूँढ़ते हैं। यूरोप के ही ढले हुए शब्दों, यथा– **कम्युनिज़्म, सोशलिज़्म, डिमॉक्रेसी, नेशनलिज़्म** आदि में सब सभ्यताओं के इतिहास को घसीट लाने की कोशिश करते हैं । अपना दर्शन जबतक पश्चिमी परिभाषा में न कहा जाए, तबतक वह युक्तिसंगत नहीं जान पड़ता । पश्चिम के शब्द पाकर मानो वह नये आलोक में खिल उठता है । भारत के तथाकथित विद्वानों ने पश्चिम का अन्धानुकरण करते हुए भारतीय-इतिहास को प्राचीन, मध्यकालीन एवं आधुनिक– इन तीन कल्पित काल-विभागों में बाँटकर, भारतीय-संस्कृति को प्राचीन काल में ठूँस दिया है और इस प्रकार **भारतवर्ष का इतिहास** (History of India) अभी तक लिखा ही नहीं गया है। इस नाम से जो पुस्तकें प्रचलित हैं, वे पाश्चात्य विद्वानों के विचारों के नमूने हैं। **इतिहास** शब्द का जो अर्थ वे लगाते हैं, उसी के अनुसार यहाँ का इतिहास उन्होंने लिखा है।[९९]

विगत कई हज़ार वर्षों से रामायण और महाभारत के साथ पुराण भी भारतीय-जीवन को अपने विविध आदर्श चरित्रों से अनुप्राणित और प्रभावित करते चले आ रहे हैं। राम, कृष्ण, हरि, शिव आदि नाम आज भी करोड़ों हिंदुओं के जीवनाधार हैं। दीन-दुःखी जनता के छिन्न-विच्छिन्न स्नायुयों और भग्न हृदयों को बल देकर तथा उसमें आशा-विश्वास का संचारकर पुराणों ने उन्हें उबारने का काम किया है।

और इस तरह इतिहास का भारतीय सामाजिक जीवन में बहुत बड़ा स्थान रहा है। प्राचीन भारत में किसी व्यक्ति की विद्वत्ता का निर्धारण उसके इतिहास-ज्ञान के आधार पर किया जाता था। प्रत्येक राजा के लिये इतिहास-ज्ञान अनिवार्य था। वैदिक-शासन का यह नियम था कि प्रतिदिन राजपुरोहित राजा को उसके पूर्वजों का इतिहास सुनाए। राजा स्वयं पढ़े– ऐसा नहीं कहा गया। क्योंकि राजा जब स्वयं इतिहास पढ़ेगा, तो वह ऐतिहासिक घटनाओं का मनमाना अर्थ लगाकर निष्क्रिय, उदासीन बन बैठेगा।[१००] रामायण में सुमन्त ने दशरथ से कहा है कि पुराणों के ग्रन्थों में जो कुछ सुन रखा है, वह श्रवण कीजिए–

एतछ्रुत्वा रहः सूतो राजानमिदमब्रवीत् ।

श्रूयता तत् पुरावृत्तं पुराणे च भया श्रुतम् ।।[१०१]

इसी प्रकार धर्मिक अनुष्ठानों, विवाहों, अश्वमेध-राजसूय-वाजपेय यज्ञों में भी इतिहास का वाचन अनिवार्य था। राजवंशों का इतिहास लिखने के लिये प्रत्येक हिंदू राजा के दरबार में विद्वान् नियुक्त होते थे। तीर्थयात्राओं में परिवारों के पण्डे उनकी वंशावलियाँ लिखते थे। गया, जगन्नाथपुरी, बद्रीनाथ इत्यादि स्थानों में यह परम्परा आज भी विद्यमान है ।

सन्दर्भ :

१. 'जाह्नवी', मार्च १६८०, पृ. १३७ महामनीषी डॉ. हरवंशलाल ओबराय रचनावली, प्रथम खण्ड, पृ. १६८, संपादकद्वय : गुंजन अग्रवाल एवं राजकुमार उपाध्याय 'मणि', प्रकाश : साहित्य भारती प्रकाशन, पटना-४, २००८

२. भारत का सांस्कृतिक इतिहास पुनर्जीवित हो, अखण्ड ज्योति, दिसम्बर, २००४, पृ. २१

३. डॉ. मुरली मनोहर जोशी द्वारा सन् २००४ में लोकसभा में दिया गया भाषण भगवाकरण का भ्रम, पुस्तक : 'यूपीए का शिक्षा के साथ खिलवाड़', प्रकाशक : भारतीय-जनता पार्टी, नयी दिल्ली, सितम्बर २००६, पृ. ४७

४. बृहद्देवता, १४.४६.५

५. निरुक्तभाष्यवृत्ति, २,१०१

६. विष्णुधर्मोत्तरपुराण, ३,१५,१ काव्यमीमांसा, म.टी., १.२

७. विष्णुमहापुराण पर श्रीधरस्वामी की टीका, वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई

८. काव्यप्रकाश, १.२

६. मार्क्सवाद और रामराज्य, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृ. ४५५.

१०. 'वैदिक-विश्व-राष्ट्र का इहिास', खण्ड 1, लेखक : पुरुषोत्तम नागेश ओक, पृ. ३८८.

११. ब्रह्ममहापुराण, पद्ममहापुराण, विष्णुमहापुराण, शिवमहापुराण, भागवतमहापुराण, नारदमहापुराण, मार्कंडेयमहापुराण, अग्निमहापुराण, भविष्यमहापुराण, ब्रह्मवैवर्तमहापुराण, लिंगमहापुराण, वाराहमहापुराण, स्कन्दमहापुराण, वामनमहापुराण, कूर्ममहापुराण, मत्स्यमहापुराण, गरुड़महापुराण, ब्रह्माण्डमहापुराण ।

१२. सनत्कुमार, नारसिंह, कापिल, मानव, औशनस्, वारुण, कालिका, नन्दिकेश्वर, पराशरोक्त, सूर्य, माहेश्वर, साम्ब, वृहन्नारदीय, शिवधर्म, दौर्वासस, वायु, आश्चर्य और वसिष्ठ

१३. आदि, मुद्गल, कल्कि, देवी (महाभागवत), देवीभागवत, बृहद्धर्मोत्तर, परानन्द, पाशुपत, हरिवंश (महाभारत का खिलभाग), अंगिरा, आखेटक, आत्म, एकपाद, एकाम्र, क्रियायोगसार, गणेश, जालंधर, तत्त्वसार, ताप्ती, दत्तात्रेय, धर्म, प्रभास, बृहद्धर्म, बृहन्नन्दीश्वर, बृहन्नरसिंह, मरीचि, रेणुका, लघुनारद, लीलावती, वह्नी, वासुकी, विष्णुधर्म, विष्णुरहस्य, विष्णुधर्मोत्तर, हंस, सरस्वती ।

१४. २४ हज़ार श्लोकोंवाला वाल्मीकीयरामायण, योगवासिष्ठ (महारामायण) एवं महर्षि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास विरचित अध्यात्मरामायण।

१५. महर्षि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास-विरचित एक लक्ष श्लोकोंवाला 'महाभारत' एवं उनके समकालीन महर्षि जैमिनिविरचित 'भारत'। **'सुमन्तुजैमिनिवैशम्पायनपैलसूत्राभाष्यभारतमहाभारतधर्माचार्याः'** (आश्वलायनगृह्यसूत्र, ३.४.४), अर्थात् 'सुमन्त सूत्रकार हैं, जैमिनि भारतकार, वैशम्पायन

महाभारतकार एवं पैल धर्मशास्त्रकार।' जैमिनिकृत 'भारत' का केवल 'अश्वमेधपर्व' ही प्राप्त है, जो गीताप्रेस, गोरखपुर से **'जैमिनियाश्वमेधपर्व'** शीर्षक से प्रकाशित है।

१६. 'महाभारत की कथाएँ', आनन्दमार्ग प्रचारक संघ, कलकत्ता, १६८१ ई.
१७. वही, पृ. ४
१८. बृहन्नारदीयपुराण, उत्तरभाग, २४.२०
१६. भविष्यमहापुराण, मध्यमपर्व, १.७.३
२०. वही, ब्राह्मपर्व, २१६.३४
२१. वही, २१६.४३
२२. भागवतमहापुराण, ३.१२.३६
२३. विष्णुमहापुराण, ३.४.१०
२४. वही, ५.१.३८
२५. ब्रह्ममहापुराण, १.२८
२६. वही, २३५.४
२७. मत्स्यमहापुराण, ६६.५५
२८. नरसिंहपुराण, ५५.१०५
२६. सौर्यपुराण, ४५.१३
३०. वही, ४८.५७
३१. अथर्ववेद, १५.६.११
३२. वही, १५.६.१२
३३. गोपथब्राह्मण, १.१.२१
३४. तैत्तिरीयब्राह्मण, ११.४७
३५. शतपथब्राह्मण, ११.५.६.७
३६. छांदोग्योपनिषद्, ३.४.१
३७. वही, ३.४.२
३८. वही, ७.१.२, ७.२.१, ७.७.१
३६. वही, ७.१.४
४०. दक्षस्मृति, २.५१
४१. अत्रिस्मृति, ३ .७
४२. हारीतस्मृति, ५.२८७
४३. वही, ५.३४८
४४. वही, ५.५०६
४५. व्यासस्मृति, ३.१०
४६. वही, ४.४५
४७. महाभारत, आदिपर्व, १.२०४
४८. वही, आदिपर्व, १०२.१८
४६. वही, शान्तिपर्व, ५०.३६

५०. गौतमसूत्रभाष्य, ४.१.६२
५१. काशीकेदारमाहात्म्य, ब्रह्मवैवर्ते, १५.४
५२. ब्रह्मसूत्र, १.३.३३
५३. भविष्यमहापुराण, ब्राह्मपर्व, २.५६
५४. अर्थशास्त्र, १.१.५.१४
५५. वही, २.५.६.६०
५६. पुराण ही इतिहास हैं, लेखक : रमाशंकर जमैयार, वेद अमृत, जनवरी, २००५, पृ. २४
५७. विष्णुमहापुराण, ३.६.२८.२६, भविष्यमहापुराण, ब्राह्मपर्व, २.६, नन्दीपुराण, १०.२५
५८. **'शिक्षाकल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति ।** —मुण्डकोपनिषद्, १.१.५
५९. याज्ञवल्क्यस्मृति, १.१.३
६०. 'पुराण ही इतिहास हैं', लेखक : रमाशंकर जमैयार, 'वेद-अमृत', जनवरी, २००५, पृ. २४.
६१. भविष्यमहापुराण, ब्राह्मपर्व, २.४-५, वही, उत्तरपर्व, २.११, शिवमहापुराण, ७.१.१.४१, कर्ममहापुराण, १.१.१२, मत्स्यमहापुराण, ५३.६५, विष्णुमहापुराण, ३.६.२५, मार्कण्डेयमहापुराण, १३४.१३, नरसिंहमहापुराण, १.३४, ब्रह्मवैवर्तमहापुराण, १३३.६, स्कन्दमहापुराण, प्रभासखण्ड, २.८४, ब्रह्माण्डमहापुराण, प्रक्रियावाद, १.३८, वराहमहापुराण, २.४, अग्निमहापुराण, १.१४, देवीभागवतपुराण, १.२.१८, सौर्यपुराण, ९.४, अभिधानचिन्तामणि, गरुड़महापुराण, २.२८
६२. Hermitage Publishers, 2006, ISBN 1557791546, 9781557791542
६३. कल्याण, 'हिंदू-संस्कृति अंक', गीताप्रेस, गोरखपुर, १९५० ई., पृ. ३०१.३०२.
६४. मुण्डकोपनिषद्, ३.१.६
६५. तैत्तिरीयोपनिषद्, १.११
६६. मनुस्मृति, ४.१३८
६७. 'India has its well written history and the Puranas exhibit that history and chronology.... Puranas are not 'pious frauds'.—
History of classical Sanskrit Literature, 1937, p.2
६८. 'To try fixing ancient historical chronology from Athens, Kandy, London or Tokyo dubbing or presuming the Indian Puranas to be frauds is at best a very squint-eyed view of Indian History."—
Some Blunders of Indian Historical Research, pp.206-207
६९. "Modern Europen writers have inclined to disparge unduly the authority of the Puranic lists, but closer study find in them, much genuine and valuable historical tradition."—
Early History of India, P.2.
७०. *India in Greece: or, Truth in mythology: containing the sources of the Hellenic race, the colonisation of Egypt and Palestine, the wars of the Grand Lama, and the Bud'histic propaganda in Greece, Published by J.J. Griffin, 1852.*
७१. हेमाद्रिपुराण
७२. शतपथब्राह्मण, १०.४.२.२३
७३. 'The Guinness Book of World Records', Sterling Publishing Co. Inc., 1981, ISBN 0-80690-196-9.

७४. काशीकेदारमाहात्म्य, ब्रह्मवैवर्ते, १५.४-७
७५. वही, १५.६-१०
७६. शतपथब्राह्मण, १४.२.४.१०, बृहदारण्यकोपनिषद्, २.४.१०, मैत्रायणीयमारण्यकम्, ६.३२
७७. भागवतमहापुराण, ३.१२.३६
७८. कल्याण, 'हिंदू-संस्कृति अंक', पृ. २६५.
७६. पद्ममहापुराण, सृष्टिखण्ड, १.५१
८०. विष्णुमहापुराण, तृतीयस्कन्ध, तृतीयोऽध्यायः
८१. कल्याण, 'हिंदू-संस्कृति अंक', पृ. २६५ महर्षि वेदव्यास, लेखक : पं. उमाशंकर दीक्षित, पृ. २८
८२. पुराण ही इतिहास हैं, लेखक : रमाशंकर जमैयार, 'वेद अमृत', जनवरी, २००५, पृ. २४.
८३. 'इतिहास-दर्शन', लेखक : वासुदेव शरण अग्रवाल, 'माधुरी', श्रावण, तुलसी संवत् ३०६, पृ. ५०, ५७.
८४. निरुक्त, २.११
८५. जैमिनीयन्यायमाला, १.१.५३.५४
८६. मैत्रायणीसंहिता, भाग ३
८७. आपस्तम्बधर्मसूत्र, १.५.४
८८. निरुक्त, १.२०
८६. कौषीतकिब्राह्मण, १०.३०
६०. ऐतरेयब्राह्मण, ३.१६
६१. ऋग्वेद, ८.७५.६
६२. तैत्तिरीयब्राह्मण, ३.१२.६२
६३. ब्रह्मसूत्र, १.३.२८
६४. वही, १.३.२६
६५. शान्तिपर्व, २३२.२४
६६. विष्णुमहापुराण, ३.६.३२
६७. इतिहास-दर्शन, लेखक : वासुदेव शरण अग्रवाल, 'माधुरी', श्रावण, तुलसी-संवत्, ३०६, पृ. ५०-५१.
६८. वही, पृ. ५१.
६६. वही
१००. वैदिक-विश्व-राष्ट्र का इतिहास, खण्ड १, पृ. ३८७.
१०१. वाल्मीकीयरामायण, बालकाण्ड, ६.१

बाबा साहिब आपटे भवन
केशव कुञ्ज, झण्डेवाला,
नई दिल्ली - ५५

कृषि दर्शन

कुलुई की कृषि व्यावसायिक शब्दावली - ३

मौलू राम ठाकुर

इसमें संदेह नहीं कि सारे कुल्लू क्षेत्र में खेत छोटे-छोटे हैं तथा बहुत कम रकबे में खेती-बाड़ी होती है। शेष बहुत बड़े भू-भाग में या तो जंगल हैं या झाड़ियां और पत्थर हैं जहां कुछ पैदा नहीं होता; परन्तु कुल्लू की भूमि बहुत उपजाऊ है; तथा यहां की जलवायु भी बड़ी संवेदनशील और स्वास्थ्यवर्धक है। जब कुल्लू प्रशासनिक दृष्टि से पंजाब का भाग था तो एक बार किए गए सर्वेक्षण के आधार पर कुल्लू का क्षेत्र पंजाब भर में सर्वाधिक प्रकार के अन्न उगाने वाला क्षेत्र घोषित हुआ था। यह तथ्य आगे फसलों के विवरण से पुष्ट हो जाएगा। यहां मात्र इतना उल्लेख करना उचित है कि कुल्लू की जलवायु और ऋतुओं का यहां के लोक-जीवन तथा भूमि की उपयोगिता पर इतना सौहार्द प्रभाव है कि यहां हर प्रकार की फसलें और सब्ज़ियां पैदा होती हैं और परिणामस्वरूप इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि जहां देश के अन्य भागों में अनेक बार अकाल का सामना करना पड़ा है वहीं कुल्लू के लोगों को इस तरह की परिस्थितियां झेलनी नहीं पड़ी हैं। वास्तव में यह सब यहां की ऋतुओं की विविधता है जिसने इसे ऐसी विशेषताएं प्रदान की हैं। ऋतु आधारित कृषि सम्बन्धी शब्दों के बारे में इतिहास दिवाकर के अंक चैत्र, कलियुगाब्द ५११६ (अप्रैल, २०१४) तथा आश्विन, कलियुगाब्द ५११६ (अक्तूबर, २०१४) में विवेचना हुई है। कुछ अन्य शब्दों का विवरण यहां प्रस्तुत है –

बास्त

मूलतः बास्त ऋतु १६ फाल्गुन से १५ वैशाख तक रहती है। फाल्गुन के महीने में ही कुल्लू के देवी-देवता इन्द्र की सभा से वापस अपने मन्दिरों में आना आरंभ करते हैं और फागली मेले के अवसर पर प्रत्येक देवता अपनी बरशोहा और भारथा सुनाता है। बरशोहा में वर्ष भर की भविष्यवाणी करता है। उसे इन्द्र की सभा से क्या मिला है– अच्छी फसलें और बहुत उपज अथवा फसलों और पैदावार में भारी कमी, सुख शान्ति अथवा दुख-क्लेश, सूखा अथवा बाढ़, स्वास्थ्य अथवा बीमारी, बंदरों और चूहों का प्रकोप इत्यादि। इसके अतिरिक्त देवता दोनों फसलों-शौयरी व नियाही को किस दिन पहली बार हल चला कर आरम्भ किया जाएगा आदि सूचनाएं दे देता है। भारथा में देवता अपना इतिहास बताते हैं। वे कहां से आए, कब आए, मार्ग की घटनाएं, यहां किन समाज विरोधी शक्तियों का दमन किया आदि। जो देवता फागली नहीं मनाते वे प्रथम चैत्र को जेठा बिरशु के मेले पर इस तरह का आयोजन करते हैं। चैत्र मास के मध्य तक कुल्लू के निचले क्षेत्र बर्फ से मुक्त हो जाते हैं और बंसत का मौसम आरम्भ होता है। तब गुठलीदार फलों के पेड़ तथा खुमानी, आड़ु, पलम आदि पतों के आने से पहले ही

पीले फूलों से लद जाते हैं और सरसों के पीले खेत सारे वातावरण को स्वर्णिम, लुभावना और आकर्षक बना देते हैं।

वैशाख मास के आरम्भ तक बिना गुठली के फलों के पौधे, विशेष रूप से सेब के पेड़, पहले पत्ते और फिर तुरन्त बाद सफेद फूलों से भर जाते हैं। इस मौसम के सब से अच्छे फूल **ज़ौरे** होते हैं जिसका अर्थ ''जौ के (फूल)'' होता है। यह इसका बहुवचन रूप है। प्रायः इसे ही प्रयोग में लाया जाता है, अन्यथा इसका एकवचन **ज़ौरा** बनता है। इसको तैयार करने के लिए एक बड़े घड़े को उसके आधे भाग तक मिट्टी और गोबर से भर देते हैं। उस में जौ के बीज बो देते हैं; उसके बाद घर के अंधेरे से कमरे में रख देते हैं। जब घड़े के अन्दर जौ के बीज उग जाते हैं तो क्योंकि वे बिना धूप के उगे होते हैं, इस लिए उनका रंग पीला होता है। उन्हें जड़ से ही उखाड़ा जाता है। इनकी छोटी-छोटी गुछियां बना कर देवताओं को भेंट की जाती हैं और फिर स्वयं पहन कर आनंद लेते हैं।

नुआ संवत प्रति वर्ष चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को अनेक नामों से मनाया जाता है, यथा– **गुडला साज़ा** (क्योंकि उस दिन गुड़ जरूर खाया जाता है)। **शुड़क साज़ा**– इसे चुपके से मनाने की प्रथा है। लोग सोते समय अपने सिराने के नीचे गुड़ की डलिया रख कर सोते हैं और सुबह-सवेरे ही उसे खा लेते हैं। **लेहुरा साज़ा**– उस दिन गंदम के आटे, गुड़ और पानी के घोल को देर तक चूल्हे पर पकाते हैं और इस जो लेटी सी बन जाती है उसे **लेहुरा** कहा जाता है और ऐसे ही गंदम के आटे के पतले घोल को तवे पर जो रोटियां बनती हैं उन्हें **चिल्हडे** कहा जाता है और इन दो प्रकार से खाद्यों के कारण इसे इन नामों से भी जाना जाता है। दिन के समय ब्राह्मण विद्वान घर-घर आकर नव-वर्ष से सम्बन्धित जानकारी देते हैं, और परिवार के सभी सदस्यों को ग्रह-दशाओं से अवगत कराते हैं। शौयर और नैयाह फसलों को किस-किस दिन बीज डाला जाएगा इसके बारे में भी बताएगा। इस प्रयोजन से उसे एक टोकरा हाछे और एक टोकरा बौगड़ा अन्न, कुछ पैसे और गुड़ का ढेला दिया जाता है। **माहूं-री-भौरण**– उन्हीं दिनों मधुमखियों के विभाजन का समय होता है। विभाजन करके मधुमक्खियां कहीं अपना घर छोड़ कर दूर न चली जाएं, इस लिए हर-एक परिवार उससे **माहूं** (मधुमक्खियां)-**री**(की)-**भौरण** (भृति ''पालन-पोषण'') नामक अनुष्ठान के बारे में पूछता है कि किस सदस्य के पास उस वर्ष की भृति है। निर्धारित सदस्य उस दिन प्रातः ही उठेगा, फूली सरसों के अपेक्षित पौधे लाएगा तथा अपने घर के सभी छतों के छेद के ऊपर फूलों को खूला रखते हुए पिछले भाग को ताजा गोबर के साथ चस्पां कर देगा। विश्वास है कि इस अनुष्ठान से मधुमक्खियां पुराने छते छोड़ कर दूर नहीं जातीं और यदि कभी मधुमक्खियां छता छोड़ कर जा रही हों अथवा दूर से कोई छता उधर से गुजर रहा हो तो वे उन पर मिट्टी या पानी की बौछार करते हैं और कहते हैं, **''बेश माहूं बेश, आगे जाला ता माहूं रानी री द्रोही होआ सा''**। यह सुन कर मधुमक्खियां वहीं किसी खाली मढाम (मधुमक्खियों के लिए निर्मित आवास) में बैठ जाती हैं।

सलाहर – सरदी के मौसम में ठंड और बर्फ के कारण कोई काम नहीं होता। बास्त के आने पर भी कुल्लू के लोग तब तक द्रान्ती, किलन, कदाल या हल भूमि में नहीं चलाते जब तक वैशाखी के तुरन्त बाद सलाहर नामक उत्सव मनाया नहीं जाता। सील (शिल 'जौ की बाली'')+आहार (भोजन)=शिलाहर >सलाहर के दिन प्रातः ही पौ फटने से पहले देवता का गूर, कारदार और पुजारी शिखर पूजा के लिए पहाड़ की चोटी पर पहुंचते हैं। गूर कनक के आटे को गूंध कर उसके दो बकरू, दो घी से भरे छोटे दीप बनाता है। चावल और गेहूं के आटे की कुछ रोटियां बना लेते हैं।

चावल और रोटियों में घी पिरो कर दो चौड़े पतले स्पाट पत्थर ले कर उनके ऊपर पूर्वोक्त सभी को बराबर मात्रा में डाल कर अपने से कुछ दूर रख आते हैं। ज्यों ही कहीं दूर से आ कर कौवे-पक्षी उन पर झपट पड़ते हैं तो यह मान लिया जाता है कि देवता ने उनकी भेंट स्वीकार कर ली है। यह सारी व्यवस्था **भोजन देना** कहलाती है। तभी वे नीचे गांव वालों को आवाज़ देते हैं कि **सलाहर काट लो**।

गांव वालों ने सभी तैयारियां कर रखी होती हैं– (१) **बाहुड़ लेस** ली होती है; (२) नया किरडा ले कर उस में गोबर भरा होता है; (३) धूप के साथ धड़छ (४) दाची, किलण या कदाल (५) **भुंगड़ी, गोशटू** और धूप। जिसने भी **हाक** (आवाज) सुन ली, उस घर की गृहिणी उक्त वस्तुओं को ले कर अपने जौ के खेत में पहुंचेगी। एक हाथ में धूप-धड़छ थामे और दूसरे द्वारा भुंगड़ी (घी से चोपड़ा हुआ गूंधा हुआ गेहूं का आटा) को चारों दिशाओं की ओर फैंकती हुई धरती माता की निम्न रूप से पूजा करती हैं –

जयकार धरती माता! तेरी खोणी-खौटी खाई,
अन्न देई, धन देई,
शद्दर देई, फारा देई,
तेरी जौ, गेहूं री सेरी,
कोठड़ी दार्ठे भौरी केरी।

''जय हो धरती माता! मैं तेरी पूजा करती हूं। जो कुछ तू पैदा करती है हम उसपर निर्भर करते हैं। तू हमें पर्याप्त मात्रा में अन्न और धन दे देना। तू हमारे कोठड़ी-दार्ठों (अनाज रखने के काष्ठ निर्मित पात्र) को अपने जौ और गेहूं से भर दे''।

बीजारोपण – उन्हीं दिनों ग्राम देवता द्वारा निर्धारित तिथि को खरीफ की फसल के लिए पहली बार बीज डाला जाता है। कुलुई में हौळणा और बाहणा क्रियाएं भिन्नता लिए हुए है। हौळणा का अर्थ खाली हल चलाना है; तथा बाहणा के मौके पर खेत में बीज डाला जाता है। जब-जब पहले-पहल खेत में अनाज बीज जाना हो तो घर से आटे का पिदंला (गोला) बना कर खेत में ले जाते हैं। उस पिन्दले पर अपने दायें हाथ की प्रथम तीन उगलियों द्वारा तिलक लगाते है। तब उस पिंदले द्वारा अर्ध-दान रूप में टोकरे में रखे बीज की पूजा करते है। शेष पिंदले को किसान हल में जोते हुए बैलों को खिला कर निम्न रूप से कामना करता हुआ बेज़ा शोटणा (बीज फैंकना) शुरू करता है –

जय अन्न देवता! देऊ-देवी रे नामे पौज़ी,
साधु संता रे नामे पौज़ी, पौछे-पाहुणे रे नामे पौज़ी,
जीजु-कमोडु रे नामे पौज़ी, चिड़ू चंघाड़ू रे नामे पौज़ी,
राज-काजा रे नामे पौज़ी, दान-धरमा रे नामे पौज़ी ।

उपर्युक्त कामनाओं से यह स्पष्ट है किस तरह पहाड़ों के बीच, मुख्य धारा से बहुत दूर रहता हुआ काशतकार किसान अपनी जिम्मेदारी के प्रति कितना सजग और सतर्क है। वह जानता है कि उसका बोया हुआ अन्न केवल उसके लिए नहीं है, उसे जीव-जन्तु भी खाएंगे, पशु-पक्षी भी खाएंगे, देवी-देवताओं, साधु-संतों, अतिथि-महमानों के लिए भी अन्न चाहिए ही। इस लिए वह प्रार्थना करता है कि अन्न देवता! इतना अवश्य उपजना कि इसमें से कोई खाली हाथ न जाए।

उपरोक्त विवरण में प्रयुक्त कुछ विशिष्ट शब्दों में **बाहुड़** – स्त्री.सं. बाहुल (अनेक तहों वाला) का तद्भव रूप; कुलुई में घरों के कच्चे फरश जिनमें अनघड़े मोटे तख्त बिछाए जाते हैं। उन पर चिकनी मिट्टी और गोबर का घोल ३-४ इंच तक बिछाया जाता है। समतल किए जाने के बाद इसपर स्वच्छ और ताजा गोबर की लिपाई की जाती है। अब इसमें पवित्रता स्थापित की जाती है। मासिक-धर्म में बैठी स्त्री इसे छू नहीं सकती। वह **ज़ाहर जूठी** हैं अर्थात् स्पष्टतः/प्रकटतः जूठी है। साधारण लोग भी इससे छूते नहीं है। वह बिना घर को छुए अपने पहने हुए सारे कपड़े धोएगी, स्वयं नहाएगी, धोए हुए कपड़ों को बाहर रखेगी, दूसरे कपड़े पहनेगी और तब वह घर के अन्दर जाएगी परन्तु रसोई में नहीं जा सकती। तीसरे दिन वह प्रातः ही उठेगी, बाहुड़ की लिपाई करेगी, नहाएगी और सारे कपड़ों को धोएगी, **प्रचेल शोटेगी,** घर के अन्दर जाएगी, रसोई में जाकर रोटियां आदि भोजन तैयार करेगी, लेकिन अभी वह **चोखी** नहीं हुई है। आठवें दिन वह पूर्व रूप से कपड़े धोएगी, बाहुड़ की लिपाई करेगी और नहाएगी तथा पूर्ण चौखा करेगी, नहाएगी और पूर्णतया चोखी होगी। इस तरह केवल एक स्त्री महीने में तीन बार बाहुड़ की लिपाई करती है। वर्ष भर जो मेले, पर्व त्योहार आदि मनाए जाते हैं हर बार बाहुड़ **लेसणी** पड़ती है। बाहुड़ के साथ कोई लीपा-पोती नहीं की जाती, वरन् सं. धातु लेष् के तद्भव रूप लेस की क्रिया लेसना का प्रयोग ही अधिक उचित है क्योंकि अन्यत्र जो रसोई में गोबर का चौका लगाया जाता है वह पर्याप्त नहीं है। यहां तो 'लेष्ट' मिट्टी के ढेले का प्रयोग जरूरी होता है। परिणामस्वरूप बाहुड़ के तहों पर तह जमने से अनेक पुराने घरों में तो इसकी मोटाई दो-ढाई फुट तक हो गई होती है।

बेज़ा पु. बीज; **अका.** बीज; **हेंड** शोटना/शेटणा सं. क्रि. फेंकना, देना (यथा दाने शोटना); **अका.** छोड़ देना; **डा.** खुला छोड़ देना, **जो.** शेटणु खो देना; **पं.** सुट्णा; सटणा; **हेंड.** शेटना, फेंक देना।

प्रचेल- सं. पु. शब्द संस्कृत शब्द 'प्रचेल' का तद्भव रूप है। वहां इसका अर्थ 'पीत चंदन' है। पुराने समय में, और उच्च परिवारों में आज-कल भी, सब तरह की सफाई के बाद जब महिला धोए हुए कपड़े पहनती थी तो कुंगु, केसर आदि का प्रयोग किया करती हैं। तभी उस द्वारा प्रचेल शोटा गया

माना जाता है।

चोखा - वि. स्वच्छ (सं.), पवित्र; विपरीतार्थक ''जूठा''।

तौंदी

यह ऋतु लगभग १६ वैशाख से १५ आषाढ़ तक रहती है। सारे कुल्लू क्षेत्र में इन दिनों अन्य दिनों की अपेक्षा अधिक गरमी पड़ती है और वे दिन तौंदी कहलाते हैं जो सं० तपतः का तद्भव रूप है। सारी सरदी में जब बर्फ के कारण सभी वृक्ष-बूटे पतों-विहीन ठूंठ दिखाई देते है, उनमें नये पते, नवीन कौंपलें निकल आती है और साथ ही शुष्क और सूखी धरती पर हरा घास बिछ कर सारा वातावरण हरा-भरा दिखाई देता है। इस ऋतु को मेला-जाचा-री रुत (मेल त्यौहारों की ऋतु) कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी क्योंकि इन दिनों एक ही नाम से अनेक स्थानों पर मेले आयोजित होते हैं। इसके अनेक कारण भी हैं – अभी जमीन का काम आरम्भ नहीं होता, बर्फ के दौरान घरों में बैठे रहने से अब मौसम के खुल जाने पर मनोरंजन की तमन्ना जोर पकड़ती है। इस लिए प्रथम चैत्र को कोन्हा बिरशु से लेकर प्रथम वैशाख को जेठा बिरशु से होते हुए प्रथम आषाढ़ तक अनेकों गांवों में बिरशु नाम के मेले प्रसिद्ध है। नगर की देवी त्रिपुरा-सुन्दरी की विख्यात शाढ़ी जाच (आषाढ़ का मेला) आषाढ़ की बिजाय ५ से १० ज्येष्ठ तक मनाई जाती है।

खड़ुनू-रक्षाबंधन

१६ आषाढ़ से १५ भादों तक के तिथि त्यौहारों में श्रावण पूर्णिमा का रक्षाबन्धन का त्यौहार बहुत प्रसिद्ध है। इसे कुल्लू में अनेक नामों में मनाया जाता है, यथा– राखी, राखड़ी, खड़ुनु आदि। जब रक्षाबंधन को व्यावहारिक स्वरूप दिया गया तो बाजू पर बांधने के लिए जिस धागे का प्रयोग किया गया उसे ''राखी'' का नाम दिया गया। कुलुई सहित पहाड़ी की सभी बोलियों में लघुता-विशालता टा-टे-टी, ड़ा -ड़े-ड़ी आदि प्रत्ययों द्वारा दिखाने की मुख्य विशेषता है। उसी प्रवृति के कारण राखी से रखड़ी शब्द बना है। बराखड़ी का अभिप्राय बहुत रखड़ियों से है। यहां इसमें संख्यावाचक विशेषता भी आ गई है। खड़ुनू का अर्थ है ''रखड़ी वाला पुनू''। पूर्णिमा को कुलुई में पुनू कहते हैं। क्योंकि श्रावण-पूर्णिमा को रक्षाबन्धन का त्यौहार मनाया जाता है, इस लिए इसे खड़ुनू कहना बहुत उपयुक्त है। यह पुलिंग एकवचन रूप है।

रक्षाबन्धन के दिन कुल्लू क्षेत्र में बहिनें तो अपने भाई की कलाई में राखी बांधती ही है, परन्तु कुछ क्षेत्रों में यह राखी पुरोहित अपने यजमानों के हाथों में बांधते हैं। उस दिन लोग सवेरे से ही अपने पुरोहित की प्रतीक्षा मे बैठे होते हैं। दिन के समय वह आता है और घर के सभी सदस्यों को राखी पहना देता है। जो सदस्य घर पर न हो उसे भी वह राखी दे देता है। प्रत्येक घर से उसे लोग दक्षिणा स्वरूप गुड़ का एक बड़ा-सा ढेला, एक टोकरी आछे अन्न की, एक टोकरू बगड़े अन्न का दे देते हैं। पुरोहित के आज के दिन घर पर आने का बड़ा लाभ यह भी है कि लोग अपने ग्रह जानने के इच्छा रखते हैं। ऐसी सूरत में उसे कुछ पैसे भी दान स्वरूप मिल जाते हैं।

डायणी टराणे रा साज़ा-शनोहली

डाकिनी, जोगनी, जादुगरनी आदि अनेक प्रकार की प्रेतात्माएं, चुड़ैलें पुराने समय से ले कर इस समस्त पहाड़ी क्षेत्र को सताती रही हैं। इसी लिए प्रतिवर्ष प्रथम भादों को ऐसी अभिचारिनियों को भगाने के लिए दिन निर्धारित रखा गया है। दिन के समय अनेक स्थानों पर शनोहली नाम से मेले लगते हैं। ऐसे मेलों में डुघीलग की शनोहली बड़ी प्रख्यात है। पहले दिन को लोग देवी भागसिद्ध के मन्दिर की सौह में कुशक अर्थात् बिच्छुबूटी का ढेर लगाते हैं। दूसरे दिन देवी का गूर, अन्य गूरों सहित, देऊ-खेल करता है। इस में वह पहले उन सभी अस्त्र-शस्त्र यथा गुर्ज-गदा, सांकल-श्रृंखला, घूंडी-धड़छ, कटारों आदि का प्रदर्शन करता है, जिनको देवी ने अपने तथा समाज के विरोधी तत्वों और शत्रुओं का दमन करने के लिए प्रयोग में लाया था। उसके बाद गूर तथा उस के सहयोगी वैसा ही प्रदर्शन कुशक के साथ करते हैं; परन्तु क्योंकि उन को देवी का वरदान प्राप्त है और साथ ही उन्हें मंत्र-ज्ञान शक्ति का आश्रय हैं इसलिए उन पर कुशक का कोई असर नहीं पड़ता। अंत में ज्यों ही गूर दर्शकों में किसी को निशाना बांध कर कुशक का प्रहार करता है, लोग चारों ओर से कुशक के ढेर पर झपट पड़ते हैं तथा हर कोई अपने सामने वाले पर कुशक की बौछाड़ करता है। शाम को हर एक परिवार अपने पशुओं को अंधेरा होने से पहले ही पशुशाला में बंद कर देता है क्योंकि उन का विश्वास है कि प्रेतात्माएं या तो ऐसी वस्तुएं हड़प कर जाएंगी या अपने साथ मण्डी जिला के घोघरू धार पर ले जाएंगी, जहां उनका आज वार्षिक सम्मेलन है। लोगों ने दिन को ही किसी गूर से सरसों के दाने मंत्र के रखे हुए होते हैं और अब वह उन में चकमक पत्थर के बारीक टुकड़े, तान्त्रिक झाड़ी भेखल के पते तथा उसकी कुछेक पूर्ण छोटी शाखाएं मिला कर घर की छत पर जाता है, कौःरे के ऊपर तीन स्थानों पर भेखल की पूर्ण शाखा रखेगा और उक्त मिश्रण की मुट्ठी भर कर बौछाड़ करता हुआ जोर-जोर से पुकारता है –

डायणीए रण्डे, घोघरू धारा-बे जा
आपणा आला बौछू खा,
आपणे भाई-बे भारी न्हे।

व्रती रा साज़ा-जन्माष्टमी

इस अवधि का एक अन्य महत्त्वपूर्ण त्यौहार जन्माष्टमी है। ग्रामीण क्षेत्र में इसे व्रती-रा-साजा के नाम से जाना जाता है। उस दिन लोग व्रत रखते हैं। उन के मन में यही धारणा रहती है कि वे दिन भर पुण्य और कल्याण का काम करे। वास्तव में आज का दिन लोकहित, लोकसेवा, बहुजन हिताय के कामों के लिए, हर एक सवेरे ही उठता है। रास्ता ठीक करना है, बाबड़ी की सफाई करने को है, पुल टूट गया है, पशुओं को रास्ता भारी बरसात के कारण मिट्टी पत्थर के गिरने से अवरुद्ध हो गया है, ये ऐसे काम हैं जिनकों जमीनदार अपने कामों में व्यस्तता के कारण अब तक कर नहीं पाए हैं। आज गांव वाले इन सभी कामों को निपटा कर ही घर लौटेंगे। हर एक के घर में आज विशेष खाना बेढ़वीं पकती हैं। बेढ़वीं के साथ ही घी का होना अनिवार्य है। इसी लिए प्रत्येक घर में इन दोनों का पहले से ही प्रबन्ध होता है। इसी कारण इस त्यौहार का दूसरा नाम 'बेढ़वी साजा' भी है।

आज के दिन अनेक देवी-देवताओं के मेले भी लगते हैं। ऐसे मेलों में रूपी घाटी के सीस गांव के जमदग्नि के मेले का विशेष महत्त्व है। जमदग्नि ऋषि को सत्युग में ही यह अनुभूति हो गई थी कि द्वापर युग में भादों महीने के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को कृष्ण का जन्म होगा। तब माता देवकी के साथ उन्हें भारी कष्ट सहन करने पड़ेगे। इसलिए उस कष्ट के निवारण हेतु व्रत रखना आरम्भ किया और आज तक न केवल ऋषि अपितु उसका सारा समाज आज के दिन व्रत तो रखते ही हैं, साथ में सर्वजन-हित काम भी कर रहे हैं। ऋषि अपनी भारथा में इस तथ्य का इस रूप में उल्लेख करते हैं –

सच ढुणु पाथर भोना ती
द्वारपरा-न कृष्ण अवतार होणा ती
माता देवकी रा कष्ट निभाऊ ती
सतजुगा-न अष्टमी रा व्रत कराऊ ती।

यहां ढुणू शब्द - ढुण् धातु का भूतकालिक कृद्न्त है; मूल रूप में यह अ.क्रि.भी. है और स. क्रि. भी। यहां इस का प्रयोग अ.क्रि. के रूप में हुआ है जिस का अर्थ 'बोला' है। इसी तरह भोना भी अ. क्रि. और सं. क्रि. है तथा यहां इसका प्रयोग भूतकालिक - सतत कृदन्त है, और अर्थ 'फटता था' है। कुलुई बोली में अपादान का प्रत्यय तथा 'में' के अर्थ में अधिकरण का एक ही प्रत्यय 'न' है, यह तथ्य ऊपर के अंश से स्पष्ट हो जाता है- द्वापरा-न (द्वापर में) तथा सत्जुगा-न (सतयुग से ले कर।) अर्थात् ''सत्य बोला पत्थर फटता था। द्वापर युग में कृष्ण अवतार होना था। माता देवकी का कष्ट निभाया था। सत्युग से ही अष्टमी का व्रत किया था''।

अध्यक्ष,
देवप्रस्थ साहित्य एवं कला संगम,
देवप्रस्थ भवन, ढालपुर, कुल्लू (हि.प्र.)

ठाकुर रामसिंह जी का अन्तिम सफर

प्रेम सिंह भरमौरिया

ठाकुर रामसिंह जी से मेरा परिचय तो काफी पहले से था लेकिन १९९२ में जब निरमण्ड से बदली होकर हमीरपुर आया तो ठाकुर जी से घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया और १९९४ से लेकर उनके स्वर्गवास होने तक यह सम्बन्ध बना रहा। ठाकुर जी बहुत सारी सामाजिक राजनीतिक व सांस्कृतिक जानकारी मेरे साथ सांझा करते थे। अभी मैं केवल ठाकुर जी के जीवन की अन्तिम यात्रा का ही वर्णन कर रहा हूँ।

४ जुलाई २०१० को प्रातः ९:३० बजे में कार्यालय जाने के लिए तैयार हो रहा था तो ठाकुर जी का लैण्ड लाईन पर फोन आया और ठाकुर जी स्वयं फोन कर रहे थे। उन्होंने कहा कि मेरा कल दिल्ली जाने का कार्यक्रम है और वहां से एक दिन के बाद में शिमला कार्यक्रम के लिए जाऊंगा और शिमला से एक दिन के लिए हमीरपुर आऊंगा और फिर जालन्धर जाऊंगा वहां पर भी एक कार्यक्रम रखा है। उसके बाद १२ जुलाई तक मैं हमीरपुर आऊंगा। आप नेरी आ जाओ और संग्रहालय के निर्माण सम्बन्धी व शोध संस्थान के बारे में महत्त्वपूर्ण बातें आप से करनी है, क्योंकि मेरा स्वास्थ्य कुछ ठीक नहीं चल रहा है। मैंने ठाकुर जी को कहा कि अभी मैं कार्यालय जा रहा हूँ। ११ बजे तक नेरी पहुंच जाउंगा। ठाकुर शेर सिंह और मैं ११ बजे नेरी पहुंचे तो ठाकुर जी हमारा इन्तजार कर रहे थे और कहा चाय हम बाद में पीयेंगे पहले माधव भवन चलो और काम समझ लो अभी समय बहुत कम बचा है। हम तीनों माधव भवन की ओर चल दिए जैसे ही मुख्य द्वार पर पहुंचे *"एक दम ठाकुर जी को झटका सा लगा और उनका चश्मा मेरे आगे गिरा और ठाकुर जी तीन सीढ़ीयों से नीचे लगभग गिर गए लेकिन शेर सिंह जी ने उन्हें जमीन पर गिरने से पहले सम्भाल लिया और उनका शरीर थर-थर कांपने लगा।"* हमने उन्हें पकड़ कर वहीं कुर्सी पर बैठा दिया और पानी पिलाया लेकिन ठाकुर जी जिद करने लगे और गुस्से से बोले भरमौरिया जी समय कम है और ऊपर चल कर काम समझ लो। मेरे बार-बार कहने के बावजूद ठाकुर जी नहीं माने और कहने लगे अब मैं ठीक हूं। ठाकुर जी के कहने के अनुसार हम पहली मंजिल पर गए वहां पर उन्होंने आवश्यक निर्देश दिए और कहा एक महीने के अन्दर इन कार्य को पूरा करो और उसके बाद संग्रहालय का दूसरा काम शुरू कर दिया जाएगा। फिर दूसरी मंजिल चल कर कुछ काम बताए, लेकिन उनका सांस जोर-जोर से चल रहा था मैंने जोर देकर कहा ठाकुर जी मैंने सारा काम समझ लिया है। अब कक्ष में बैठ कर चर्चा कर लेंगे। नीचे पहुंचने के पश्चात् मैंने मुख्य चिकित्सा अधिकारी हमीरपुर को फोन किया और पूरी घटना की जानकारी उन्हें दी। उन्होंने कहा आप वही रहो मैं मेडीकल स्पेस्लिस्ट (Specialist) को जांच के लिए भेजता हूं। लगभग एक घंटे के पश्चात् डॉक्टर सुभाष जी नेरी पहुंचे और मैंने उन्हें घटना की पूरी जानकारी दी। उसके पश्चात् उन्होंने उनका

चैकअप किया और मुझे बताया कि इन्हें Mild Heart Attack आया है और इन्हें पूरा आराम चाहिए। उन्होंने आवश्यक दवाईयां भी लिख दी। मैंने डॉक्टर की सलाह के अनुसार ठाकुर जी को १५ दिन का पूर्ण विश्राम करने को कहा। डॉक्टर सुभाष जी ने जो दवाईयां लिखी थी मैंने पर्ची श्री चेतराम गर्ग जी को दी और उसी समय ठाकुर जी ने श्री चेतराम जी को लिखवाया और कहा इस काम को कर लो। श्री चेतराम दवाई लेने हमीरपुर चले गए और मैं ठाकुर जी से चर्चा करता रहा। ठाकुर जी ने मुझे कहा आप बड़े चेतराम जी को फोन लगाओ और उन्हें भी यहां बुला लो उनसे कुछ चर्चा करनी है। मैंने श्री चेतराम जी से बात की और उन्होंने कहा, मैं रात तक नेरी पहुंच जाउंगा। शाम को जब घर चला तो ठाकुर जी ने कहा, मैं चेतराम जी के साथ ही कल घर आ जाउंगा। आप ने डाक्टर को नेरी मत लाना। ५.७.२०१० को सुबह ठाकुर जी और चेतराम जी मेरे घर पहुंचे और ठाकुर जी पहले से स्वस्थ नजर आ रहे थे, इसलिए श्री चेतराम जी अपने तय कार्यक्रम के अनुसार प्रवास पर चले गए और मुझे कह गए, आप समय पर ठाकुर जी का चैकअप करवाते रहाना। ५.७.२०१० में हमीरपुर अस्पताल गया और डॉ. सतीश जी को पिछले दिन की पर्ची बताई। उन्होंने कहा, मैं शाम को उनको चैक अप कर लूंगा, क्योंकि उनका सरकारी आवास हमारी क्लोनी में ही था। ६.७.२०१० को और ७.७.२०१० ठाकुर जी काफी स्वस्थ हो गए और दोनों डॉक्टर जो उन्हें देख रहे थे, आश्वस्त थे कि ठाकुर जी बहुत ही खुश हैं और मेरी दोहती जो भी १ साल की नहीं हुई थी उसके साथ काफी खेले। ८.७.२०१० को सुबह ठाकुर जी कुछ ढीले होने लगे और बार-बार कमरे में घूमने का प्रयास करने लगे और नाश्ते में भी बहुत कम खाना खाया। मैंने जब उनसे पूछा तो कहा ठीक है डाक्टर तो आप दिन को लाएंगे ही। दोपहर के खाने पर जब मैं घर आया तो ठाकुर जी सुबह की तरह ही थे और थोड़ा सा भोजन लिया और बिस्तर पर सो गए। शाम ३ बजे मैं अस्पताल गया और मैंने डॉक्टर साहिब को सारी स्थिति बताई। डॉ. ने कुछ Tonic Sample जो उनके पास पड़े थे, मुझे दे दिए और कहा शाम को ७ बजे तक मैं चेकअप घर आकर कर लूंगा। जैसे ही हास्पिटल से निकला मेरी श्रीमती का फोन आया और उन्होंने कहा ठाकुर जी आप को बुला रहे हैं। मैं घर पहुंचा तो ठाकुर जी ने मुझे कहा, *''भरमौरिया जी में शौचालय तक जाता हूं तो वापिस आने पर पूरा थक जाता हूं और पहले ऐसा कभी नहीं होता था।''* घर आते-आते मुझे श्री प्रदीप गौतम जी भी मिल गए जो हास्पिटल में आपातकालिक सहायक के रूप में कार्यरत हैं। मैंने गौतम जी से कहा आप ठाकुर जी को देखो। उन्होंने ठाकुर जी की नवज़ देखी और मुझे कहा गड़बड़ है, डॉक्टर सुभाष जी से बात कर लो। मैंने डॉक्टर साहिब को फोन लगाया, गौतम जी से कहा कि डॉक्टर जी को सही स्थिति बताओ। उन्होंने आपस में बात की और गौतम जी ने मुझे डॉ. सुभाष जी से बात करने को कहा। डॉक्टर साहिब ने मुझे कहा आप एक दम ठाकुर साहिब को अस्पताल पहुंचाओ, मैं भी पहुंच रहा हूँ और मैंने स्टाफ से बात कर ली है उन्हें I.C.C.U. में भर्ती करना पड़ेगा। मैंने एकदम कार ली और अस्पताल पहुंचा दिया। श्री चेतराम जी को फोन किया उन्हें पूरी बात बताई। उन्होंने कहा मैं ७ बजे तक हमीरपुर पहुंच रहा हूं, आप डॉक्टरों से सलाह मशबिरा करो। यहां पर ठीक हो जाएंगे या कहीं ले जाने पड़ेगे। ६:३० बजे तक लगभग प्रदेश में खबर फैल गई कि ठाकुर राम सिंह जी बीमार हो गए

हैं। श्री अनुराग ठाकुर जी माननीय सासंद जो हमीरपुर में थे, वह भी हास्पिटल पहुंच गए और उन्होंने कहा भरमौरिया जी इन्हें यहां से P.G.I. शिफ्ट करना चाहिए और थोड़ी देर में स्वास्थ्य मन्त्री डॉ. राजीव बिंदल जी का फोन आया, उन्होंने कहा भरमौरिया जी आप इन्हें शिमला ले आओ और यहां पर अच्छा इलाज हो जाएगा। श्री चेतराम जी ने D.M.C. लुधियाना हीरो हार्ट में डॉ. एस. के कुंभकर्णी से बात की और उन्हें मेरा फोन नम्बर दे दिया। डॉक्टर कुम्भकर्णी जी हिरोहार्ट विशेषज्ञ का फोन आया और उन्होंने पूछा कैसी हालत है? उस समय I.C.C.U. में डाक्टर सुभाष और के.सी. चोपड़ा उपस्थित थे। मैंने फोन डॉ. सुभाष जी को दे दिया और उन्होंने सारी स्थिति उन्हें बताई और डॉ. कुम्भकर्णी जी ने बताया मैं हेड ऑफ दा डिपार्टमैण्ट डाक्टर बाड़र साहिब से बात करता हूं और आप को फोन करता हूं। श्री चेतराम जी भी हमीरपुर पहुंच चुके थे। थोड़ी देरी बाद डॉ. कुम्भकर्णी जी का फोन आया। उन्होंने कहा आप अतिशीघ्र इन्हें लुधियाना पहुंचाओ। हमने निर्णय लिया कि लुधियाना ही जाएंगे। मेरी श्रीमती को जब पता चला तो उन्होंने ठाकुर जी को बताया कि आपको लुधियाना ले जा रहे, आप कुछ खा लो। वे बोले, क्या आप घर से कुछ लाई हैं? ठाकुर जी ने कहा भरमौरिया जी डाक्टर क्या कह रहे हैं। मैंने कहा, यहां पूरी सुविधा नहीं है इसलिए बाहर जाना ही ठीक रहेगा। उन्होंने एक बार फिर कहा ऐसा करो मेरे रिस्तेदारों को भी सूचना कर दो और जैसा आप ठीक समझते हैं करो। लगभग ६:३० सांय बजे हम चले और ४ बजे डी.एम.सी. लुधियाना में पहुंचे। वहां पर पहले ही सूचना थी और आपातकालीन सेवा में उन्होंने ठाकुर जी को सम्भाल लिया और डॉक्टर सुभाष जी से आवश्यक जानकारी ली तथा सुभाष जी को जाने को कह दिया। जांच पड़ताल करके लगभग एक घंटे के बाद बताया कि पैसमेकर डालना पड़ेगा और आवश्यक कागजी कार्यवाही के पश्चात् उन्होंने अपना काम करना शुरू कर दिया। उन्हें आईसीयू में भर्ती कर लिया। ६.७.२०१० को सुबह १० बजे तक ठाकुर जी को पेसमेकर पड़ गया था। सुबह होते ही काफी स्वयंसेवक लुधियाना पहुंचना शुरू हो गए। किसी को मिलने की अनुमति नहीं थी। उन दिनों राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की राष्ट्रीय प्रतिनिधि सभा राजस्थान में चल रही थी और वहां से फोन आने शुरू हो गए और मैंने श्री बनवीर जी प्रान्त प्रचारक और क्षेत्र प्रचारक मा. रामेश्वर जी को पूरी जानकारी दी। १०.७.२०१० को परमपूजनीय संरसंघचालक जी का फोन भी आया और उन्होंने कहा क्या ठाकुर जी से बात कर सकते हैं। मैंने कहा बात तो कर सकते हैं लेकिन डॉक्टरों ने मना कर रखी है। मैं आपकी I.C.C.U. में जाकर डॉक्टर की अनुमति लेकर बात करवाता हूं। लेकिन उन्होंने स्वयं ही कहा कि अभी बात करना उचित नहीं रहेगा और आप उन्हें बता देना भागवत का फोन आया था, कुशल मंगल पूछ रहे थे। श्री चेत राम जी ने १०.७.२०१० को शाम को कहा, *"भरमौरिया जी वैसे तो यहां पर काफी लोग हैं लेकिन हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे कम से कम दो आदमी जब तक ठाकुर जी पूरी तरह स्वस्थ नहीं होते हैं यहां रहे। मैं तो यहीं रहूंगा, आप तीन–चार लोगों की एक टीम बनाओं, क्योंकि आपने भी नौकरी करनी है और पूरा समय भी यहां नहीं रह सकते हैं।"* ११.७.२०१० को मुझे हमीरपुर आना था और मैंने चेतराम जी से कहा व्यवस्था हो जाएगी। डॉ. ए. के. कुम्भकर्णी जी ने अपना केविन हमें दे दिया था और कहा जब तक ठाकुर जी स्वस्थ नहीं होते, तब तक आप इस केविन का प्रयोग कर सकते हैं। उस दिन जब में

हमीरपुर चला और I.C.C.U. में ठाकुर जी से अनुमति लेने गया जो मैं हैरान हो गया। ठाकुर जी ने मुझे कहा गार्गी का जन्म दिन परसों है, वहां पर व्यवस्था कौन देख रहा है। *मैंने कहा, "ठाकुर जी सब व्यवस्था हो गई है, आप ठीक हो जाओ और आपको पार्टी अलग से देंगे।"* मैंने हमीरपुर आ कर श्री सुमन बनयाल और श्री शेर सिंह ठाकुर जी से बात की हम ऐसी व्यवस्था बनाते हैं जब तक ठाकुर जी ठीक नहीं होते बारी-बारी लुधियाना जाएंगे और वह भी मान गए और जुलाई महीने से ६ सितम्बर २०१० तक ठाकुर जी चाहे लुधियाना रहे या कुल्लू श्री रामसिंह जी के घर पर रहे, हम तीनों में से एक व्यक्ति ठाकुर जी के साथ रहे। यहां पर मैं एक और व्यक्ति का वर्णन भी करना चाहूंगा। जब ठाकुर जी को अस्पताल से छुट्टी मिली तो डॉक्टरों ने निर्णय लिया कि अभी ठाकुर जी को हमीरपुर नहीं भेजना है और फोलोअप के लिए लुधियाना में ही रखना पड़ेगा श्री चेतराम जी ने स्थानीय स्वयंसेवकों तथा सह प्रान्त बौद्धिक प्रमुख श्री विजय नड्डा जी से बात की और तय हुआ कि श्री सुशील शर्मा जी जिनका अपना व्यवसाय लुधियाना में है और हिमाचल की देहरा तहसील गांव 'मलेती' से सम्बन्ध रखते हैं उन्होंने ठाकुर जी को अपने घर में ठहराने की इच्छा प्रकट की। उनका घर हर तरह से ठाकुर जी के लिए सुविधाजनक था क्योंकि D.M.C. वहां से थोड़ी दूरी पर था। उन्होंने अपनी कोठी के तीन कमरे पूरी तरह हमारे सुपुर्द कर दिए। सारी भोजन की व्यवस्था उन्हीं के घर पर थी। जितने भी लोग यहां मिलने आते, उन्हें भोजन के समय भोजन और चाय के समय चाय उपलब्ध करवाई। यहां पर रहते हुए ठाकुर जी ने काफी स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया और अपने कमरे से ड्रांइग रूम तक चलना भी आरम्भ कर दिया। ठाकुर जी इतने कमजोर होते हुए भी कोशिश करते थे कि जो आदमी उनके साथ सोया है उसे असुविधा नहीं होनी चाहिए और रात को जब बैचेनी होती तो आहिस्ता-आहिस्ता उठ कर सोफे पर बैठ जाते। जब उन्हें उठ कर बैठाने की कोशिश करते तो कहते आप सोए रहो, कहीं बीमार मत हो जाना। सुशील जी अपने आप काफी व्यस्त रहते थे और उन्हें डिस्क की समस्या थी। एक दिन उन्होंने मुझे बताया भाई जी ठाकुर जी के पांव मेरे घर में पड़ने से मैं धन्य हो गया है और मैं दर्द से हमेशा चितिंत रहता था लेकिन ठाकुर जी १०,१५ दिनों में ९६ वर्ष की आयु में भी बीमारी के समय जो हिम्मत है उससे मुझे इतना सकून मिला कि मैं अपनी सारी बिमारी का दर्द भूल गया हूं। मानसिक बल मिला है, अब लगता है मुझे कोई शारीरिक समस्या नहीं है। सुशील जी के घर से ठाकुर जी नेरी एक दिन के लिए आए और स्वास्थ्य लाभ के लिए कुल्लू चले गए। श्री रामसिंह जी के परिवार ने ठाकुर जी की सेवा अपने परिवार की तरह की। अगस्त के तीसरे सप्ताह दुबारा ठाकुर जी की तबीयत अचानक खराब हो गई और उन्हें लुधियाना D.M.C. में ले जाना पड़ा और I.C.C.U. में भर्ती करना पड़ा और ईश्वर की कृपा से ऐसा लगने लगा कि अब ठाकुर जी बिल्कुल स्वस्थ हो गए और कुछ ही दिनों में उन्हें हस्पताल से छुट्टी मिल जाएगी। श्री चेतराम जी का स्वास्थ्य भी उन दिनों खराब होना शुरू हो गया था अतः १.९.२०१० को सुमन के लुधियाना से जाने पर चेतराम जी ने कहा में २-३ दिनों के लिए कीरतपुर जा आता हूं। ठाकुर जी तो अब स्वस्थ हो गए हैं। आप इन्हें देख लो और वह भी चले गए। सितम्बर ३ तारीख तक ऐसा लगा ठाकुर जी बिल्कुल ठीक ही गए हैं और ३.९.२०१० का डॉ. वार्डर जी

ने ठाकुर जी से कहा कि ठाकुर जी घूमने का दिल तो नहीं करता है? ठाकुर जी ने कहा, *''आप अनुमति देगे तो घूम लूंगा''* और व्हील चेयर पर वार्ड ब्याय ने लगभग २ घंटे तक वार्ड से बाहर घुमाया और मैं भी उनके साथ रहा। मैंने ठाकुर जी से पूछा कैसा लग रहा है? उन्होंने कहा, ''बहुत अच्छा।'' १०:५० बजे जब में उनके पास गया तो उन्होंने कहा, *''भरमौरिया जी देखो मेरी उगलियों का रंग कैसा है।''* मैंने सोचा इनको लग रहा है मैं कमजोर हो गया हूं इसलिए मैंने कहा, *''ठाकुर जी उगलियों का रंग तो रेडीश है और अब तो आप की खून की कमी भी दूर हो रही है''।* उन्होंने कहा, *''नहीं इनका रंग तो काला हो गया है और चमन लाल को भी ऐसा हुआ था और वह नही रहे थे जाओ डॉक्टर से बात करो''।* मैंने डॉक्टर साहिब से बात की तो उन्होंने सन्तोष जनक उतर नहीं दिया। इसलिए मैंने निर्णय लिया कि डॉ. कुम्भकर्णी जी से बात करता हूं। डॉ. कुम्भकर्णी और डॉक्टर वार्डर दूसरे वार्ड I.C.C.U. से बाहर निकल रहे थे और मुझे देख कर डॉ. वाडर जी कहने लगे, *''आप ठाकुर जी के पास रहना यदि कोई बाहर जाने को कहे तो कहना मुझे एच.ओ.डी. साहिब ने कहा है।''* मैंने उनसे ठाकुर जी की सेहत के बारे में पूछा तो उन्होंने कहा, *''हम पूरा जोर लगा रहे हैं।* ततपश्चात मैं ठाकुर जी के वैड के पास चला गया और थोड़ी देर के बाद श्री चेतराम जी भी पहुंच गए। मैंने उन्हें पूरी स्थिति चेतराम जी को बताई। चेतराम जी कहने लगे *''चिन्ता की कोई बात नहीं, ठाकुर जी की स्थिति कई बार इस तरह की हुई है।''* उसके बाद हमने ठाकुर जी से जब बात करने की कोशिश की तो उन्होंने हां, हूं के अतिरिक्त कोई उत्तर नहीं दिया। उसी दिन मैंने हमीरपुर वापिस आना था और शेर सिंह ठाकुर जी ने लुधियाना आना था और ३:३० बजे शेर सिंह जी का फोन आया, उन्होंने कहा कि मैं 'काला अम्ब' पहुंच गया हूं। अतः आप वहां से चल पड़ो। चेतराम जी ने कहा आप जाओ, शेर सिंह जी तो आ ही रहे हैं। ४ बजे मैं भी लुधियाना से घर के लिए निकल गया। घर पहुंच कर मैंने फोन पर शेर सिंह जी से ठाकुर जी का हाल जाना तो उन्होंने बताया ठाकुर जी ने उसके बाद कोई बात चीत नहीं की है और सिर्फ हाथ की हरकत कर रहे हैं। ५-६-२०१० को प्रातः मैं पांच बजे उठा और पानी पिया जो मैं सुबह नियमित रुप से पीता हूं। आज प्रातः सैर पर जाने का मन न था व पुनः सा गया मुझे नींद आ गई और ऐसे लगा ठाकुर जी बैड की निचली तरफ बैठे है और मुझसे कह रहे हैं, भरमौरिया जी मैं अब अगला रास्ता तय करूंगा और एक दम मेरी नींद खुल गई। मेरी पत्नी भी सैर कर के वापिस आ चुकी थी और मैंने उन्हें सपने के बारे में बताया तो वह कहने लगी, ठाकुर जी को कुछ हो ही तो नहीं गया है। मैंने ठाकुर शेर सिंह जी को फोन किया तो उन्होंने बताया कि ठाकुर जी को गुलोकोज चढ़ना बन्द हो गया है और अब बैंटीलेटर पर रखा है। थोड़ी देर बाद माननीय चेतराम जी का फोन आया और उन्होंने कहा अब ठाकुर जी नहीं रहे और आप सब को सूचना कर दो और यह भी कहा कि दाह संस्कार कहां करना, इस के बारे में भी विचार करो। हस्पताल से आवश्यक औपचारिकाओं को पूरा करने के पश्चात् ठाकुर जी की अंतिम यात्रा गृह जिला हमीरपुर की ओर जब शुरू हुई तो पंजाब के लुधियाना, फगवाड़ा और होशियापरु में हजारों लोगों ने उन्हें श्रद्धाजंलि दी और किनू होते हुए उनका पार्थिव शरीर जब नेरी पहुंचा तो हजारों लोग वहां पर पहुंच गए थे निर्णय हुआ कि अन्तिम संस्कार उनके पैतृक गांव ''झंडवी'' में किया जाना है। नेरी से उनकी यात्रा झंडवी के लिए चल पड़ी जहां पर

हजारों लोग उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि के लिए इन्तजार कर रहे थे। जिनमें तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री प्रेम कुमार धूमल, सांसद शांता कुमार, वर्तमान केन्द्रीय मन्त्री कलराज मिश्र स्वर्गीय पूर्व सरसंघचालक सुदर्शन जी प्रमुख थे। ठाकुर जी पंचतत्त्व में विलीन हो गए। लेकिन आज भी ठाकुर रामसिंह जी लाखों लोगों के प्रेरणा स्रोत है उनके द्वारा लगाया गया इतिहास का वृक्ष लगातार वट वृक्ष का फैलाव धारण करता जा रहा है।

मकान न. ४६६(ए), वार्ड नं. १,
निकट एचपीएसईबी क्लोनि,
अणु हमीरपुर - १७७००८ (हि.प्र.)

समाचार पत्र के स्वामित्व एवं अन्य विषयों से सम्बंधित विवरण

फार्म -४ (नियम ८ देखिए)

१. प्रकाशन स्थल	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी
२. प्रकाशन तिथि	:	अप्रैल, जुलाई, अक्तूबर, जनवरी माह का प्रथम सप्ताह
३. मुद्रक का नाम	:	चेतराम
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर-१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
४. प्रकाशक का नाम	:	चेतराम
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर-१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
५. सम्पादक का नाम	:	डॉ0 विद्या चन्द ठाकुर
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर-१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
६. उन व्यक्तियों के नाम व पत्ते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के सांझेदार या हिस्सेदार हों।	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर-१७७००१ हिमाचल प्रदेश।

मैं चेतराम प्रकाशक एवं मुद्रक इतिहास दिवाकर एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गए विवरण सत्य है।

हस्ता/-
चेतराम
प्रकाशक
दिनांक ३१ मार्च, २०१५

ठाकुर रामसिंह जन्म शताब्दी समारोह

रवि ठाकुर

फाल्गुन सौर मास की ४ प्रविष्टे और माघ चन्द्र मास के कृष्ण पक्ष की तृतीया तिथि विक्रमी संवत् १९७१ और कलियुगाब्द ५०१६ एवं ईस्वी सन् १६, फरवरी १९१५ को वर्तमान हिमाचल प्रदेश के ज़िला हमीरपुर के झण्डवीं गांव में माता श्रीमती नियातु की कोख से पिता श्री भाग सिंह के घर में जन्में वीरव्रती यशस्वी इतिहास पुरुष ठाकुर रामसिंह जी के जन्म शताब्दी समारोह का आयोजन ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान, नेरी फाल्गुन प्रविष्टे ३-४, विक्रमी संवत् २०७१, कलियुगाब्द ५११६, तदनुसार १५-१६ फरवरी, २०१५ के पूर्ण गरिमा के साथ सम्पन्न हुआ।

इस समारोह में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के राष्ट्रीय कार्यकारिणी के माननीय सदस्य **श्री इन्द्रेश कुमार** मुख्य वक्ता थे और हिमाचल प्रदेश के पूर्व मुख्यमन्त्री **प्रो. प्रेम कुमार धूमल** समारोह के मुख्य अतिथि थे। समारोह की अध्यक्षता गुवाहाटी (आसाम) के वयोवृद्ध शल्य चिकित्सक **डॉ. दिलीप सरकार** जी ने की।

दीप प्रज्ज्वलन, भारत माता के चित्र और ठाकुर राम सिंह जी के चित्र के माल्यार्पण एवं पुष्पांजलि अर्पण के साथ समारोह का शुभारम्भ हुआ जिसमें श्री इन्द्रेश कुमार, प्रो. प्रेम कुमार धूमल और डॉ. दिलीप सरकार के साथ नेरी शोध संस्थान के मार्गदर्शक महन्त सूर्यनाथ, हिमाचल प्रदेश प्रान्त संघ चालक श्री रूप चन्द, बाबा साहब आप्टे स्मारक समिति दिल्ली के अध्यक्ष डॉ. लक्ष्मीश्वर झा, नेरी शोध संस्थान वैचारिक पक्ष के निदेशक डॉ. विद्या चन्द ठाकुर सम्मिलित थे। इस अवसर पर **त्रिशा बी.एड. कॉलेज** के विद्यार्थियों ने सरस्वती वन्दना का गायन प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् **डॉ. ओम दत सरोच** द्वारा संकल्प पाठ किया गया और **श्री विपुल शर्मा** ने इतिहास पुरुष विग्रह का वाचन किया।

शोध संस्थान के वैचारिक पक्ष के निदेशक **डॉ. विद्या चन्द ठाकुर** ने समारोह में पधारे सभी उपस्थित जनों का स्वागत किया। अपने स्वागत भाषण में उन्होंने बताया कि शोध संस्थान के अध्यक्ष **श्री विजय मोहन कुमार पुरी जी** स्वास्थ्य कारणों से समारोह में नहीं आ सके, लेकिन संस्थान के प्रति उनके समर्पण भाव को व्यक्त करना यहां आवश्यक है। उन्होंने बतलाया कि श्रद्धेय ठाकुर जी के देहावसान के दिन श्री पुरी जी ने उनसे मिलते ही कहा कि अब श्रद्धेय ठाकुर जी नहीं रहे। उनके रहते हम उनके दिशा-निर्देशों का पालन करते थे और संस्थान के बारे में श्रद्धेय ठाकुर जी ने शोध संस्थान के संचालन के लिए अपने जीवन काल में जिन-जिन व्यक्तियों को जिम्मेवारियां दी थी, उन सब ने श्री पुरी जी की चिन्ता के साथ अपने को जोड़ा और नेरी शोध संस्थान की स्थापना में स्वर्गीय ठाकुर जी के साथ सदैव सक्रिय परम सम्माननीय **श्री चेतराम जी** के मार्गदर्शन में सबने मिलकर संस्थान की गतिविधियों को आगे बढ़ाने को संकल्प लिया। श्रद्धेय ठाकुर जी के पुण्य प्रताप से यह

संकल्प फलीभूत हुआ और जन्म शताब्दी के पावन अवसर पर यह बतलाते हुए हमें प्रसन्नता होती है कि शोध संस्थान की गतिविधियों में सतत विस्तार हुआ है और इसके भावी विस्तार के प्रति भी हम पूर्ण आश्वस्त हैं।

इसके उपरान्त शोध संस्थान के महासचिव **श्री राजेन्द्र शर्मा** ने संस्थान के कार्यों का प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हुए संस्थान को सशक्त बनाने हेतु सब के सहयोग एवं मार्गदर्शन की कामना की।

विशेषांक का लोकार्पण

शोध संस्थान की त्रैमासिक अनुसंधान पत्रिका **इतिहास दिवाकर** के **ठाकुर रामसिंह जन्म शताब्दी विशेषांक** का लोकार्पण प्रो. प्रेम कुमार धूमल के कर कमलों द्वारा हुआ। इस विशेषांक में स्वर्गीय ठाकुर जी के लेख संग्रहीत है। इतिहास दिवाकर पत्रिका की विकास यात्रा पर प्रकाश डालते हुए शोध संस्थान के समन्वय प्रमुख **श्री चेतराम गर्ग** ने बताया कि इतिहास दिवाकर पत्रिका का प्रवेशांक चैत्र मास कलियुगाब्द ५११० (अप्रैल, २००८) में प्रकाशित हुआ है और उसके बाद पत्रिका का प्रकाशन समयबद्ध हो रहा है। अब तक पत्रिका के २८ अंक प्रकाशित हुए हैं जिनमें ठाकुर रामसिंह स्मृति श्रद्धांजलि, स्वामी विवेकानन्द सार्ध शताब्दी और ठाकुर रामसिंह जन्म शताब्दी नाम से तीन विशेषांक सम्मिलित हैं।

पुस्तकों का लोकार्पण

कार्यक्रम में चार नवीन प्रकाशित पुस्तकों का लोकार्पण हुआ। इन पुस्तकों में **डॉ. विद्या चन्द ठाकुर** सम्पादित **लोक परम्परा में सृष्टि आख्यान** को इन्द्रेश कुमार जी के, **डॉ. ओम प्रकाश शर्मा** द्वारा लिखित दो पुस्तकों **लोकगाथा दिग्दर्शिका** तथा **भारतीय संस्कृति** को डॉ. दिलीप सरकार जी के एवं **डॉ. हेमेन्द्र राजपूत** द्वारा लिखित **महाभारत कालीन इतिहास** को महन्त सूर्य नाथ जी के कर कमलों द्वारा लोकार्पित किया गया।

लोकार्पित पुस्तकों की विषय वस्तु एवं इनके लेखकों के सम्बन्ध में **डॉ. रमेश शर्मा** द्वारा सारगर्भित जानकारी प्रदान की गई।

शताब्दी स्मृति सम्मान

ठाकुर रामसिंह जी के निकट सहयोगी एवं नेरी शोध संस्थान के प्रति समर्पित विशिष्ट व्यक्तियों में पं. जगन्नाथ शर्मा, डॉ. वेद प्रकाश अग्नि, श्री छेरिंग दोरजे, डॉ. कुलदीप अग्निहोत्री, श्री बीरबल शर्मा, धर्मेन्द वर्मा (दिल्ली), ज्ञान सिंह (कांगड़ा), देव कृष्ण नेगी (किन्नौर), रुप शर्मा, डॉ. बलदेव चावला, डॉ. दलीप कुमार फूफन, श्री भावेन्द्र नाथ मेधी, पं. जगन्नाथ शर्मा, को मुख्य अतिथि प्रो प्रेम कुमार धूमल के कर कमलों ठाकुर रामसिंह **जन्म शताब्दी स्मृति सम्मान** द्वारा सम्मानित किया गया।

डॉ. विष्णुश्रीधर वाकणकर राष्ट्रीय पुरस्कार

बाबा साहब आपटे स्मारक समिति, दिल्ली प्रतिवर्ष इतिहास और संस्कृति के क्षेत्र में विशेष कार्य करने वाले विद्वान को भारत सरका की पदमश्री उपाधि से विभूषित पुरातत्त्ववेत्ता **डॉ. विष्णुश्रीधर वाकणकर** के सम्मान में **डॉ. विष्णु श्रीधर वाकणकर राष्ट्रीय पुरस्कार** प्रदान करती है जिसमें प्रशस्ति पत्र, शाल, टोपी के साथ 51,000/- रुपये का नगद पुरस्कार दिया जाता है। समिति के

अध्यक्ष डॉ. लक्ष्मीश्वर झा ने बताया कि बाबा साहब आप्टे समिति को श्रद्धेय ठाकुर रामसिंह जी का मार्गदर्शन प्राप्त था और हम उन्हीं के पद चिन्हों पर आगे बढ़ा रहे हैं। अतः समिति ने उनके जन्मशताब्दी समारोह में यह राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान करने का निर्णय लिया है। समारोह में इस पुरस्कार से वेद शास्त्र निष्णात विद्वान **डॉ. गणेश दत शर्मा जी** को प्रो. प्रेम कुमार धूमल मुख्य अतिथि महोदय ने सम्मानित किया। प्रशस्ति पत्र का वाचन **श्रीमती कल्पना गर्ग** ने किया। डॉ. गणेश दत शर्मा जी ने अपने वक्तव्य में आयोजकों को धन्यवाद किया और वेदों के महत्त्व पर सारगर्मित प्रकाश डाला।

कविता एवं गीत

समारोह के बीच श्री मजलसी राम वैरागी तथा श्री इन्द्रभान सिंह तोमर ने ठाकुर जी को समर्पित कविताओं और श्री शेष राम ने देश भक्ति गीत से सब के भाव विभोर कर दिया।

विशिष्ट उद्बोधन

कार्यक्रम के मुख्य वक्ता माननीय **श्री इन्द्रेश कुमार जी** ने ठाकुर रामसिंह जी के विचार कार्यशैली और इतिहास दृष्टि पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि ठाकुर जी इतिहास के इन सभी पहलुओं पर ध्यान देते थे जिसके कारण चिन्तन के अभाव में हमें अनेक संकट झेलने पड़े थे। उन गलतियों से शिक्षा लेने और अपनी गौरवशाली राष्ट्रीय परम्परा से प्रेरणा प्राप्त करने की इतिहास की सारी बातें ठाकुर जी व्यवहारिक धरातल पर समझाते थे। इतिहास का विद्यार्थी होने और इतिहास की गहरी पकड़ होने के कारण ही उन्होंने देश भर में इतिहास के कार्य को विस्तार दिया। वे अन्तिम सांस तक ध्येय निष्ठा से काम करते रहे। नेरी शोध संस्थान ठाकुर रामसिंह जी ध्येय निष्ठा और दूरदर्शिता का परिणाम है।

कार्यक्रम के अध्यक्ष **डॉ. दिलीप सरकार जी** ने अपने सम्बोधन में बतलाया कि जब ठाकुर जी असम में प्रान्त प्रचारक बन कर आए तो मेरे पर उनकी कृपा दृष्टि तब हुई, उस समय में चौथी कक्षा में पढ़ता था, तब मुझे उनके आशीर्वाद से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का स्वयंसेवक बनने का सौभाग्य मिला। उस समय से निरन्तर उनके जीवन पर्यन्त मुझे उनका स्नेह और मार्गदर्शन प्राप्त रहा। उनका राष्ट्रभक्त, दृढ़व्रती व्यक्तित्व सब की प्रेरणा रहा है और भविष्य में भी हम सब उनके व्यक्तित्व के प्रेरणा स्रोत से राष्ट्र वैभव के लिए समर्पित रहेंगे।

मुख्य अतिथि **प्रो. प्रेम कुमार धूमल जी** ने सम्बोधित करते हुए कहा कि श्रद्धेय ठाकुर रामसिंह जी इतिहास का काम करते-करते स्वयं इतिहास बन गए हैं। उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम चरण में प्रकृति और मानव के १९७ करोड़ वर्षों के तथात्मक इतिहास लेखन के लिए नेरी में शोध संस्थान के कार्यों और उद्देश्यों के साथ है। शोध संस्थान में ठाकुर जी की ऊर्जस्वी प्रेरणा सदा विद्यमान है। जिसकी शक्ति से शोध संस्थान का कार्य सफलता के मार्ग सदा आगे बढ़ता रहेगा।

महन्त सूर्यनाथ जी ने अपने आशीर्वचन में कहा कि हम सच्ची निष्ठा से कार्य करेंगे तो सफलता हमें निरन्तर मिलती रहेगी। उन्होंने बताया कि हमारे लोक गीत इतिहास की अमूल्य निधि है, शोध संस्थान को इस दिशा में भी कार्य करना है। सब लोग लोक गीतों की सामग्री संस्थान को उपलब्ध करवाएं जिससे लोक गीतों में इतिहास का महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न होगा।

कुल्लू का लोक नृत्य

कार्यक्रम के अन्तिम चरण में कुल्लू का लोक नृत्य **नाटी** प्रस्तुत हुई। पारम्परिक वेशभूषा में पट्टू, दाठू (शिरोवस्त्र), चन्द्रहार से सुसज्जित महिलाओं और चोला, टोपा, कलगी, से सुशोभित पुरुष नर्तकों ने लोक वाद्यों की सुमधुर धुन पर लोक गाया के सुरीली स्वर-लहरियों के साथ कदम से कदम मिला कर नाटी की बहुरंगी थिरकन से सब का मन मोह लिया।

अन्त में वन्दे मातरम् के गायन के साथ सार्वजनिक कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

उल्लेखनीय है कि **डॉ. सुरेश कुमार सोनी** और **प्रो. राकेश कुमार शर्मा** ने बड़ी कुशल पूर्वक मंच संचालन का दायित्व सम्भाल कर कार्यक्रम की सफलता में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

ठाकुर रामसिंह संग्रहालय

शताब्दी समारोह के पावन अवसर पर सार्वजनिक समारोह से पूर्व श्री इन्द्रेश कुमार एवं प्रो. प्रेम कुमार धूमल द्वारा ठाकुर राम सिंह संग्रहालय का लोकार्पण किया गया। इस संग्रहालय में वीरव्रती यशस्वी इतिहास पुरुष ठाकुर रामसिंह जी के नियमित प्रयोग का सामान, उनके निजी संग्रह की पुस्तकें, फाइलें एवं डायरियां रखी गई हैं।

छायाचित्र प्रदर्शनी

हिमाचल प्रदेश के सुप्रसिद्ध छायाकार श्री बीरबल शर्मा द्वारा छायांकित छायाचित्रों की **अतुल्य हिमाचल** नाम की प्रदर्शनी शताब्दी समारोह का विशेष आकर्षण रही। इसमें हिमाचल प्रदेश के मण्डी नगर के साथ बिन्दरावणी में श्री बीरबल शर्मा द्वारा संस्थापित **हिमाचल दर्शन फोटो गैलरी** के मन्दिरों, मेलों, झीलों, किलों और लोक जीवन की विविधता को दर्शाने कुछ विशिष्ट चित्र प्रदर्शित थे। दर्शकों, को विशेष रुझान पर स्थानीय जनता और स्कूल के विद्यार्थियों के लिए यह प्रदर्शनी कक्ष में १५ फरवरी, २०१५ से २८ फरवरी २०१५ तक लगवाई रखी गई।

संगोष्ठी और भजन संध्या

१५ फरवरी के सांय काल विद्वानों की श्री ठाकुर जी के इतिहास लेखन पर संगोष्ठी हुई और भजन संध्या का आयोजन हुआ। भजन संध्या में विरेन्द्र शर्मा तथा ओम प्रकाश चन्देल के साथी कलाकारों ने विभिन्न भजन गा कर श्रोताओं के भक्ति भाव से आनन्द विभोर किया।

यज्ञ-हवन अनुष्ठान

फाल्गुन प्रविष्टे ४ (१६ फरवरी २०१५) को श्रद्धेय ठाकुर जी के जन्म दिवस के उपलक्ष्य में विधि विधानपूर्वक यज्ञ-हवन अनुष्ठान के साथ जन्मशताब्दी समारोह का समारोप हुआ।

शताब्दी समारोह की सम्पूर्ण व्यवस्था में श्री जगवीर चन्देल, डॉ. नन्द लाल ठाकुर, श्री प्यार चन्द परमार, सुरेन्द्र शर्मा, सुमन बनयाल, रमेश रांगड़ा, राजेश शर्मा, विवेक नड्डा, सतपाल, नरेश शर्मा, प्रवीण भट्टी, डॉ. विकास शर्मा का अत्यधिक सहयोग रहा।

गांव नेरी, डा. खगल,
त. व जिला हमीरपुर (हि.प्र.)